ISSN: 3049-2211

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

खंड-1, अंक-9 सितम्बर- 2025

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

ISSN: 3049-2211

सम्पादक मंडल

डा. देवराज सिंह

मुख्य सम्पादक

सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष

सब्जी विज्ञान विभाग

कृषि विज्ञान विभाग, इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

प्रिया पाण्डेय

सहायक मुख्य सम्पादक

शोधार्थी

ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)।

सहायक सम्पादक

डा. विक्रमा प्रसाद पाण्डेय

पूर्व अधिष्ठाता (उद्यान महाविद्यालय)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

डा. अरविन्द कुमार चौरसिया

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)

डा. महेन्द्र कुमार यादव

सहायक प्राध्यापक (सब्जी विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

डा. वर्तिका सिंह

सहायक प्राध्यापक (फल विज्ञान)

आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

डा. रविशंकर पटेल

सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)

स.व.भा.प.कृ. एवं प्रौ. वि.वि., मेरठ (उ.प्र.)

डा. रविकेश कुमार पाल

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

रामा विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

डा. सरिता

सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

डा. सचि गुप्ता

सहायक प्राध्यापक (पुष्प विज्ञान)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

डा. विवेक पाण्डेय

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)

डा. देवेश तिवारी

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, तूरा कैंपस (मेघालय)

डा. कुमार अंशुमान

सहायक प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

के.एन.आई.पी.एस.एस., सुल्तानपुर (उ.प्र.)

डा. मंजीत कुमार

सहायक प्राध्यापक

लिंगायस विद्यापीठए फरीदाबाद, हरियाणा

श्री कल्याण सिंह

स्वतंत्र लेखक/शोधार्थी

बांदा कृ. एवं प्रौ. वि.वि., बांदा (उ.प्र.)

विषय वस्तु

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	GST 2.0: आम जनता और किसानों के लिए राहत या नई चुनौती?	4-6
2	ड्रैगन फ्रूट की उन्नत प्रवर्धन विधियाँ।	7-9
3	जल संरक्षण एवं सिंचाई तकनीकें: सतत कृषि की दिशा में एक पहल।	10-15
4	एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM)।	16-17
5	जीरो बजट प्राकृतिक खेती और कृषि तंत्र में मौजूद जैव विविधता के बीच गहरा आपसी संबंध।	18-21
6	अरुणाचल प्रदेश में ओक वृक्ष संसाधनों के माध्यम से एक्वेरियम मछली की देखभाल पर स्वदेशी तकनीकी ज्ञान।	22-23
7	पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश में वर्ष भर पशुपालन: किसानों की मासिक मार्गदर्शिका।	24-28
8	सब्ज़ी उत्पादन में उभरती प्रौद्योगिकियाँ और नवाचार।	29-32
9	कृषि और भौगोलिक संकेतक (GI Tag): किसानों की पहचान और समृद्धि का नया रास्ता।	33-35
10	जलवायु परिवर्तन का फल उत्पादन पर प्रभाव।	36-38
11	जैविक खेती: सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, विपणन और नीति।	39-41

ISSN: 3049-2211

GST 2.0: आम जनता और किसानों के लिए राहत या नई चुनौती?

डॉ अजीत कुमार, बवनीत कौर बेदी, दीक्षा आर्या, बुलबुल कुमारी
इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली, (उत्तर प्रदेश)।

भारत में कर सुधारों की लंबी यात्रा रही है। स्वतंत्रता के बाद से ही कर प्रणाली को अधिक न्यायसंगत, पारदर्शी और विकासोन्मुख बनाने की कोशिशें जारी रही हैं। 1 जुलाई 2017 को लागू वस्तु एवं सेवा कर (GST) इस यात्रा का सबसे बड़ा कदम माना गया, जिसने **'एक कर, एक राष्ट्र, एक बाज़ार'** का सपना साकार करने का प्रयास किया। हालांकि, पिछले आठ वर्षों में इस प्रणाली को लेकर कई विवाद, चुनौतियाँ और आलोचनाएँ सामने आईं। इन्हीं कमियों को दूर करने के उद्देश्य से सरकार ने हाल ही में **GST 2.0** पेश किया है, जो **22 सितंबर 2025 से पूरे देश में लागू** हो चुका है। इसे ऐतिहासिक सुधार माना जा रहा है क्योंकि इसके अंतर्गत कर दरों को न केवल सरल किया गया है बल्कि आम जनता और किसानों के लिए राहत की कई घोषणाएँ की गई हैं। यह बदलाव ग्रामीण अर्थव्यवस्था, कृषि उत्पादन, उपभोक्ता बाज़ार और सरकारी राजस्व, सभी पर दूरगामी असर डालने वाला है।

GST 2.0 के प्रमुख बदलाव

1. स्लैब संरचना में कमी

GST की सबसे बड़ी आलोचना इसकी जटिल कर दरों को लेकर होती रही है। पहले इसमें चार प्रमुख स्लैब (5%, 12%, 18% और 28%) थे। GST 2.0 ने इसे घटाकर केवल दो स्लैब **5% और 18%** कर दिया है।

- **5% स्लैब**: इसमें रोज़मर्रा की ज़रूरत की वस्तुएँ, कृषि उपकरण, बीज, खाद, कीटनाशक और छोटे पैमाने की सेवाएँ शामिल की गई हैं।
- **18% स्लैब**: इसमें औद्योगिक सामान, इलेक्ट्रॉनिक्स, वाहन, निर्माण सामग्री और गैर-आवश्यक वस्तुएँ आती हैं।

2. 0% दर की श्रेणी

पहली बार कई आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं को पूरी तरह करमुक्त किया गया है।

- गेहूँ, चावल, दालें, दूध, रोटी, पनीर, पराठा जैसी वस्तुएँ अब 0% पर उपलब्ध होंगी।
- स्वास्थ्य और जीवन बीमा सेवाओं को भी 0% दर पर रखा गया है, जिससे समाज के कमजोर वर्ग को सीधी राहत मिलेगी।

3. लक्ज़री और 'पाप वस्तुओं' पर उच्च दर

संतुलन बनाने के लिए सरकार ने शराबीय पेय, सिगरेट, तंबाकू उत्पाद और बड़ी कारों जैसी वस्तुओं पर कर दर 40% तक बढ़ा दी है।

ISSN: 3049-2211

इसका उद्देश्य राजस्व अर्जित करना और हानिकारक उपभोग को नियंत्रित करना है।

4. वाहनों और इलेक्ट्रॉनिक्स पर राहत

- ट्रैक्टर और अन्य कृषि वाहन पहले जहाँ 28% टैक्स स्लैब में आते थे, अब यह 18% पर हैं।
- छोटे वाहन, मोटरसाइकिल, टीवी, फ्रिज और कूलर जैसी वस्तुओं पर टैक्स घटने से आम जनता और मध्यम वर्ग को बड़ा लाभ होगा।

5. व्यापारिक सुगमता

GST 2.0 का एक बड़ा पहलू कर प्रणाली को आसान बनाना है।

- ई-वे बिल और चालान की प्रक्रियाओं को छोटा किया गया है।
- छोटे व्यापारियों के लिए रिटर्न दाख़िल करने के नए मोबाइल-आधारित विकल्प लाए गए हैं।
- एकीकृत पोर्टल पर राज्यों की अलग-अलग कर प्रणालियों को समाप्त कर दिया गया है।

कृषि क्षेत्र पर प्रभाव

1. इनपुट कॉस्ट में कमी

किसानों के लिए सबसे बड़ी चुनौती उत्पादन लागत है।

- पहले ट्रैक्टर, पंप सेट और सिंचाई उपकरणों पर **28% तक का कर** देना पड़ता था। अब ये 18% पर आ गए हैं।
- ड्रिप इरिगेशन और स्प्रिंकलर जैसे आधुनिक उपकरण **5% पर** उपलब्ध होंगे।
- बायो-फर्टिलाइज़र और ऑर्गेनिक खाद अब 0% या 5% दर पर मिलेंगे।

इससे किसानों की लागत 8–10% तक घटने का अनुमान है। लंबी अवधि में यह उनकी आय को बढ़ाएगा और उन्हें तकनीक अपनाने के लिए प्रेरित करेगा।

2. कृषि उत्पादों की बाज़ार तक पहुँच

GST 2.0 ने राज्यों की सीमाओं पर जाँच चौकियों और कर

अड़चनों को और सरल किया है। अब किसान आसानी से सब्ज़ियाँ, फल, अनाज या दुग्ध उत्पाद एक राज्य से दूसरे राज्य तक बेच सकते हैं।

- इससे सप्लाई चेन मजबूत होगी और उत्पाद की बर्बादी कम होगी।
- विशेषकर नाशवान वस्तुओं जैसे सब्ज़ी और दूध के लिए यह राहत महत्वपूर्ण है।

3. डेयरी और पशुपालन पर असर

डेयरी उद्योग भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है।

- दूध, घी, पनीर जैसे उत्पादों पर कर घटने से उपभोक्ता को सस्ता सामान मिलेगा।
- किसानों और सहकारी समितियों को बेहतर मूल्य मिलने की संभावना है।
- यह बदलाव अमूल जैसी बड़ी सहकारी संस्थाओं से लेकर छोटे स्तर के दुग्ध उत्पादकों तक सभी को लाभ पहुँचाएगा।

4. ग्रामीण उपभोग में वृद्धि

जब किसानों की लागत घटेगी और आय बढ़ेगी तो उनकी क्रय-शक्ति भी बढ़ेगी।

- ग्रामीण उपभोक्ता अब टीवी, मोबाइल, बाइक जैसी वस्तुएँ अधिक खरीद पाएँगे।
- इससे ग्रामीण बाज़ार में मांग बढ़ेगी और कृषि सहायक उद्योगों को भी फायदा होगा।

आम जनता पर असर

1. **सस्ती रोज़मर्रा की चीज़ें**

दूध, दालें, रोटी, पराठा, दवाइयाँ और बीमा जैसी ज़रूरी सेवाएँ करमुक्त हो गई हैं। इससे सीधे तौर पर आम उपभोक्ता की जेब पर भार कम होगा।

2. **लक्ज़री वस्तुओं की कीमतें बढ़ीं**

सिगरेट, शराब, बड़ी कारें और आयातित उत्पाद अब पहले से महँगे हो गए हैं। इससे अमीर वर्ग प्रभावित होगा, लेकिन सरकार के लिए यह अतिरिक्त राजस्व का स्रोत बनेगा।

3. **मध्यम वर्ग को राहत**

इलेक्ट्रॉनिक्स, दोपहिया और छोटे वाहनों पर टैक्स घटने से मध्यम वर्ग को विशेष लाभ मिलेगा।

सरकार का उद्देश्य

GST 2.0 के पीछे सरकार के कई रणनीतिक उद्देश्य हैं:

1. **कर चोरी पर अंकुश**: दरों को सरल और कम करने से व्यापारी टैक्स चोरी की बजाय स्वेच्छा से भुगतान करेंगे।

ISSN: 3049-2211

2. **राजस्व का संतुलन**: जहाँ आवश्यक वस्तुओं पर कर घटाया गया है, वहीं लक्ज़री और पाप वस्तुओं पर बढ़ाकर संतुलन बनाया गया है।
3. **उपभोग में वृद्धि**: सस्ती वस्तुएँ मिलने से उपभोग बढ़ेगा और अर्थव्यवस्था को गति मिलेगी।
4. **सामाजिक कल्याण**: अतिरिक्त राजस्व का उपयोग स्वास्थ्य, शिक्षा और बुनियादी ढांचे पर किया जा सकेगा।

चुनौतियाँ

1. **राजस्व हानि का खतरा**

शुरुआती वर्षों में कम दरों के कारण सरकार को कर संग्रह में कमी का सामना करना पड़ सकता है।

2. **तकनीकी जटिलता**

हालाँकि प्रक्रियाएँ आसान की गई हैं, फिर भी ग्रामीण और छोटे व्यापारियों के लिए ऑनलाइन रिटर्न दाख़िल करना कठिन बना हुआ है।

3. **दर असमानता की शिकायतें**

कुछ व्यापारी मानते हैं कि अभी भी दरों में पूरी तरह समानता नहीं है।

4. **कार्यान्वयन की चुनौतियाँ**

नए बदलावों को ज़मीनी स्तर पर लागू करना विशेषकर ग्रामीण इलाकों में सरकार के लिए बड़ी चुनौती है।

कृषि से जुड़े उदाहरण

- **किसान**: पहले ट्रैक्टर के पार्ट्स पर 28% टैक्स देना पड़ता था, अब यह 18% है। इससे लागत में लगभग 10% की कमी आई है।
- **डेयरी किसान**: पैकेज्ड पनीर और घी पर टैक्स 12% से घटकर 5% हो गया है। उपभोक्ता सस्ते दामों पर खरीद रहे हैं और बिक्री बढ़ रही है।
- **फल उत्पादक संगठन**: आम और अंगूर निर्यात करने वाले किसानों के लिए ट्रांसपोर्ट और पैकिंग पर जीएसटी कम होने से अंतरराष्ट्रीय बाज़ार तक पहुँच आसान हुई है।

निष्कर्ष

GST 2.0 को भारत की कर व्यवस्था में अब तक का सबसे बड़ा सुधार कहा जा सकता है।

- इससे किसानों की उत्पादन लागत घटी है,
- उपभोक्ता को ज़रूरी सामान सस्ते मिले हैं,
- व्यापारियों के लिए प्रक्रियाएँ आसान हुई हैं,
- और सरकार को दीर्घकाल में स्थायी कर ढाँचा मिलने की संभावना है।

हालाँकि, चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। राजस्व हानि, तकनीकी कठिनाइयाँ और दर असमानता की शिकायतें सरकार को समय रहते दूर करनी होंगी। यदि ऐसा हुआ तो GST 2.0 न केवल कर प्रणाली को अधिक पारदर्शी और सरल बनाएगा बल्कि भारतीय अर्थव्यवस्था, विशेषकर कृषि क्षेत्र, को सशक्त और प्रतिस्पर्धी बनाने में भी अहम भूमिका निभाएगा।

अतः कहा जा सकता है कि नया GST 2.0 किसानों को बेहतर बाज़ार, उपभोक्ताओं को सस्ता सामान और सरकार को मजबूत कर ढाँचा देने की क्षमता रखता है। यह सुधार यदि सही ढंग से लागू हुआ तो भारत की आर्थिक वृद्धि में मील का पत्थर साबित होगा।

****

ड्रैगन फ्रूट की उन्नत प्रवर्धन विधियाँ

सौरभ वर्मा- शोध छात्र
डॉ. रवि शंकर वर्मा- सहायक प्रोफेसर
बिपिन कुमार, श्याम सुन्दर एवं विशाल कुमार- शोध छात्र
एसएएसटी, उद्यानिकी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

ड्रैगन फ्रूट, जिसे पिताया भी कहा जाता है, एक आकर्षक और पोषक तत्वों से भरपूर फल है, जिसकी खेती से अच्छा लाभ कमाया जा सकता है। इसकी खेती को सफलतापूर्वक आरंभ करने के लिए पौधों के प्रवर्धन की उपयुक्त तकनीकों की जानकारी होना आवश्यक है। इस लेख में हम ड्रैगन फ्रूट के पौधों के प्रवर्धन की उन प्रमुख तकनीकों को समझेंगे जो किसानों के लिए व्यावहारिक और लाभकारी सिद्ध होती हैं।

ड्रैगन फ्रूट के पौधों के प्रसार की विधियाँ

ड्रैगन फ्रूट के पौधे मुख्यत कटिंग और बीज के माध्यम से प्रसारित किए जाते हैं, जिनमें से प्रत्येक विधि के अपने फायदे और सीमाएँ होती हैं। सफल खेती के लिए इन प्रसार विधियों की जानकारी और उनके सही क्रियान्वयन की आवश्यकता होती है। इस लेख के माध्यम से हम ड्रैगन फ्रूट के पौधों को बढ़ाने की विभिन्न विधियों को सरल और स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करेंगे।

ड्रैगन फ्रूट का प्रवर्धन: आसान और प्रभावी उपाय-

ड्रैगन फ्रूट की खेती की शुरुआत यदि सही तरीके से की जाए, तो यह कम लागत में अधिक लाभ देने वाली फसल बन सकती है। इसके लिए जरूरी है कि प्रवर्धन की आसान और प्रभावी विधियों को अपनाया जाए, जिससे पौधों की गुणवत्ता अच्छी बनी रहे और उत्पादन क्षमता भी बढ़े। यह लेख ऐसे सरल उपायों पर केंद्रित है, जिन्हें किसान या बागवानी प्रेमी आसानी से प्रयोग में ला सकते हैं।

ड्रैगन फ्रूट की उन्नत प्रवर्धन विधियाँ

खेती के क्षेत्र में तकनीकी उन्नति के चलते अब पौधों के प्रवर्धन के लिए कई आधुनिक और वैज्ञानिक विधियाँ उपलब्ध हैं, जो पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक सफल और उत्पादक होती हैं। ड्रैगन फ्रूट के लिए भी कुछ ऐसी उन्नत विधियाँ अपनाई जा रही हैं, जो पौधों की वृद्धि को तेज और फल उत्पादन को बेहतर बनाती हैं। इस लेख में हम इन्हीं तकनीकों का विस्तार से अवलोकन करेंगे।

1. बीज द्वारा रोपण (Seed Planting)

यह सबसे सामान्य विधि है, जिसमें बीजों को सीधे खेत या नर्सरी में बोया जाता है।

प्रक्रिया:

बीजों को उचित गहराई (बीज के आकार के 2-3 गुना) में बोया जाता है। मिट्टी को नम रखा जाता है ताकि अंकुरण हो सके।

ISSN: 3049-2211

लाभ:

- ✓ कम लागत वाली विधि।
- ✓ बड़े क्षेत्रों में आसानी से बुवाई की जा सकती है।

हानियाँ:

- ✓ कुछ पौधों में अंकुरण दर कम होती है।
- ✓ फसल तैयार होने में अधिक समय लग सकता है।

2. कलम (कटिंग) विधि द्वारा रोपण (Cutting Method)

इस विधि में पौधे के तने, शाखा या पत्ती के एक भाग को काटकर नए पौधे के रूप में उगाया जाता है।

प्रक्रिया:

स्वस्थ पौधे से 6-12 इंच लंबी कटिंग ली जाती है। कटिंग को नम मिट्टी या रेत में लगाया जाता है। जड़ें आने के बाद इसे मुख्य खेत में स्थानांतरित किया जाता है।

लाभ: मूल पौधे के गुणों को बनाए रखता है।

हानियाँ: रोग फैलने का खतरा रहता है।

3. ग्राफ्टिंग विधि (Grafting Method)

इस तकनीक में दो अलग-अलग पौधों के भागों को जोड़कर एक नया पौधा तैयार किया जाता है।

प्रक्रिया:

एक पौधे (रूटस्टॉक) की जड़ और दूसरे पौधे (Scion) की शाखा को जोड़ा जाता है। जोड़े गए भाग को प्लास्टिक या रबर से बांध दिया जाता है।

लाभ:

- ✓ रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- ✓ उच्च गुणवत्ता वाले फल प्राप्त होते हैं।

हानियाँ: तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है।

4. एयर लेयरिंग (Air Layering)

इस विधि में पौधे की किसी शाखा पर जड़ों को उसी स्थान पर उत्पन्न किया जाता है, जहाँ वह मुख्य पौधे से जुड़ी रहती है।

प्रक्रिया:

- पौधे की एक स्वस्थ शाखा को चुनकर उसकी बाहरी छाल को एक छोटे हिस्से में हटा दिया जाता है।
- उस स्थान को नम मिट्टी, मॉस या नारियल के रेशे से ढककर पॉलीथिन या क्लिंग फिल्म से अच्छी तरह लपेट दिया जाता है।
- कुछ सप्ताह बाद जब उस स्थान पर जड़ें विकसित हो जाती हैं, तो शाखा को मूल पौधे से काटकर अलग कर लिया जाता है।

लाभ:

- ✓ सरल और कम खर्चीली विधि।
- ✓ मिट्टी में लगाए बिना जड़ों का विकास संभव होता है।
- ✓ अधिक सफलता दर और स्वस्थ पौधे प्राप्त होते हैं।

5. टिशू कल्चर विधि (Tissue Culture)

यह एक आधुनिक तकनीक है, जिसमें प्रयोगशाला में पौधे के ऊतकों से नए पौधे तैयार किए जाते हैं।

प्रक्रिया:

पौधे के छोटे ऊतक लेकर नियंत्रित वातावरण में विकसित किए जाते हैं। पौधे तैयार होने पर उन्हें मिट्टी में स्थानांतरित किया जाता है।

लाभ:

- ✓ रोगमुक्त पौधे प्राप्त होते हैं।
- ✓ एक साथ बड़ी संख्या में पौधे तैयार किए जा सकते हैं।

हानियाँ: महँगी तकनीक है।

निष्कर्ष

ड्रैगन फ्रूट की उन्नत प्रवर्धन विधियाँ जैसे कटिंग, ग्राफ्टिंग, एयर लेयरिंग और टिशू कल्चर, पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक प्रभावी, तेज़ और व्यावसायिक दृष्टि से लाभदायक सिद्ध होती हैं। इन तकनीकों के माध्यम से न केवल उच्च गुणवत्ता वाले पौधे तैयार किए जा सकते हैं, बल्कि रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं उत्पादन क्षमता में भी वृद्धि संभव है। यद्यपि कुछ विधियाँ जैसे टिशू कल्चर अधिक पूंजी और तकनीकी ज्ञान की मांग करती हैं, फिर भी इनका प्रयोग लंबी अवधि में बेहतर लाभ देता है। इसलिए, किसानों और उद्यमियों को चाहिए कि वे अपनी स्थानीय परिस्थितियों, उपलब्ध संसाधनों एवं उत्पादन लक्ष्यों के आधार पर उपयुक्त प्रवर्धन विधि का चयन करें। उचित तकनीक का सही समय पर और सही तरीके से उपयोग कर के ड्रैगन फ्रूट की व्यावसायिक खेती को अधिक सफल और टिकाऊ बनाया जा सकता है।

****

ISSN: 3049-2211

जल संरक्षण एवं सिंचाई तकनीकें: सतत कृषि की दिशा में एक पहल

अवधेश कुमार, मुनीश पाल एवं ललन कुमार
एम. एस. सी. (कृषि) शोधार्थी
कृषि रसायन एवं मृदा विज्ञान विभाग,
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश।

जल जीवन का आधार है। भारतीय संस्कृति में जल को **"जीवनदाता"** कहा गया है क्योंकि यह न केवल मानव जीवन बल्कि कृषि, पशुपालन, उद्योग, ऊर्जा उत्पादन और पर्यावरणीय संतुलन का मूल स्रोत है। यदि पृथ्वी पर उपलब्ध जल की बात करें तो कुल जल का लगभग 97% समुद्रों में खारा रूप में है, केवल 2.7% जल ही मीठे जल (Fresh Water) के रूप में उपलब्ध है, जिसमें से अधिकांश हिमनदों और ग्लेशियरों में बर्फ के रूप में जमा है। इस प्रकार प्रत्यक्ष उपयोग के लिए मात्र 0.3% जल ही उपलब्ध है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ लगभग 55% से अधिक जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन के लिए जल की आवश्यकता सर्वोपरि है। परंतु विडंबना यह है कि हमारे यहाँ कृषि योग्य भूमि का लगभग 52% भाग अभी भी वर्षा पर आधारित है। वर्षा का वितरण असमान और अनिश्चित होने के कारण उत्पादन स्थिर नहीं रहता। दूसरी ओर, सिंचाई युक्त क्षेत्रों में भूजल का अत्यधिक दोहन, नहरों का जीर्ण-शीर्ण ढाँचा और पारंपरिक बाढ़ सिंचाई (Flood Irrigation) पद्धति जल संकट को और बढ़ा रही है।

जल संसाधन और सिंचाई तकनीक का सही प्रबंधन कृषि उत्पादन को स्थिर, टिकाऊ और अधिक उत्पादक बना सकता है। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों और खाद्य सुरक्षा की बढ़ती मांग के बीच यह विषय और भी महत्वपूर्ण हो गया है।

जल संसाधनों का वर्गीकरण (Classification of Water Resources)

जल संसाधन वे सभी स्रोत हैं जिनसे हमें उपयोग योग्य पानी प्राप्त होता है। भारत जैसे विशाल और विविध भौगोलिक क्षेत्र वाले देश में जल संसाधनों की उपलब्धता और उपयोग का स्वरूप अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न है। जल संसाधनों को सामान्यतः निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

1. सतही जल (Surface Water)

सतही जल का आशय उन जल स्रोतों से है जो भूमि की सतह पर खुले रूप में उपलब्ध होते हैं। इसमें नदियाँ, झीलें, तालाब, नहरें, जलाशय और बाँध शामिल हैं।

- **नदियाँ :** गंगा, ब्रह्मपुत्र, सिंधु, गोदावरी, नर्मदा, कावेरी आदि नदियाँ भारत की जीवनरेखा हैं।
- **झीलें और तालाब :** ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक रूप से जल संचयन का प्रमुख साधन।
- **जलाशय और बाँध :** बड़े बाँध जैसे भाखड़ा-नांगल, हीराकुंड, टिहरी इत्यादि न केवल सिंचाई बल्कि विद्युत उत्पादन और बाढ़ नियंत्रण में भी सहायक हैं।

भारत में सतही जल की कुल संभावित उपलब्धता लगभग 690 अरब घन मीटर आँकी गई है।

2. भूजल (Groundwater)

भूजल भूमिगत स्तर पर उपलब्ध जल है जिसे कुओं, नलकूपों और बोरवेल द्वारा प्राप्त किया जाता है। कृषि में सबसे अधिक प्रयोग इसी स्रोत से होता है।

- भारत में कुल भूजल उपलब्धता लगभग 433 अरब घन मीटर मानी जाती है।
- पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में धान और गन्ना जैसी जल-गहन फसलों के कारण भूजल का अत्यधिक दोहन हो रहा है।
- कई राज्यों में भूजल स्तर 1-1.5 मीटर प्रतिवर्ष घट रहा है।

3. वर्षा जल (Rainwater)

भारत की कृषि का मुख्य प्राकृतिक स्रोत वर्षा जल है। औसतन भारत में प्रति वर्ष लगभग 1100 मि.मी. वर्षा होती है, लेकिन इसका वितरण अत्यंत असमान है।

- मेघालय में प्रतिवर्ष 10,000 मि.मी. से अधिक वर्षा होती है।
- राजस्थान के थार मरुस्थल में मात्र 200 मि.मी. वर्षा होती है।

इस असमानता के कारण एक ओर बाढ़ की समस्या होती है, वहीं दूसरी ओर सूखे की। इसलिए वर्षा जल संचयन और उसका संरक्षण अत्यंत आवश्यक है।

4. हिमनद एवं बर्फ (Glaciers and Snow)

हिमालयी क्षेत्र में बड़े-बड़े ग्लेशियर हैं जो नदियों के लिए स्थायी जल स्रोत का कार्य करते हैं। गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र जैसी नदियाँ ग्लेशियरों से निकलती हैं। जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के कारण हिमनदों के तेजी से पिघलने का खतरा है।

5. समुद्री जल (Marine Water)

समुद्रों और महासागरों में जल की मात्रा अपार है, परंतु यह खारा होने के कारण प्रत्यक्ष उपयोग योग्य नहीं है। विलवणीकरण (Desalination) तकनीक से इसे उपयोगी बनाया जा सकता है, लेकिन यह प्रक्रिया अभी महँगी है। तटीय राज्यों में इस पर अनुसंधान और प्रयोग जारी है।

6. जल संसाधनों का भौगोलिक वितरण (Geographical Distribution of Water Resources in India)

भारत में जल संसाधनों का वितरण असमान है।

- उत्तर-पूर्व भारत (असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश) में प्रचुर जल उपलब्ध है।
- उत्तर-पश्चिम भारत (राजस्थान, गुजरात, हरियाणा) में जल की भारी कमी है।
- दक्षिण भारत में नदियाँ छोटी हैं और मानसून पर निर्भर रहती हैं।

इस असमानता के कारण जल प्रबंधन नीतियों में क्षेत्रीय दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। इस प्रकार, जल संसाधनों के विभिन्न प्रकार और उनका असमान वितरण यह स्पष्ट करते हैं कि भारत में जल का सही प्रबंधन और संरक्षण क्यों इतना आवश्यक है।

भारत में जल संसाधनों की स्थिति और चुनौतियाँ

भारत में जल संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होने के बावजूद इनका वितरण असमान है। एक ओर पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में प्रतिवर्ष औसत से कई गुना अधिक वर्षा होती है, वहीं दूसरी ओर राजस्थान और गुजरात जैसे क्षेत्रों में जल संकट की स्थिति बनी रहती है। जल संसाधनों की वर्तमान स्थिति और प्रमुख चुनौतियों का विवरण इस प्रकार है –

1. भारत में जल संसाधनों की वर्तमान स्थिति

क. कुल उपलब्धता

- भारत में कुल नवीकरणीय जल संसाधन लगभग 1123 अरब घन मीटर आँके गए हैं।
- इनमें से लगभग 690 अरब घन मीटर सतही जल और 433 अरब घन मीटर भूजल है।

ख. जल का उपयोग

- कृषि क्षेत्र में – 80-85%
- उद्योगों में – 7-8%
- घरेलू उपयोग में – 5-7%

ग. वर्षा पर निर्भरता

- कुल कृषि भूमि का लगभग 52% भाग वर्षा आधारित (Rainfed) है।
- मानसून पर अत्यधिक निर्भरता के कारण कृषि उत्पादन अस्थिर रहता है।

घ. भूजल का अत्यधिक दोहन

- पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु में भूजल का तेजी से दोहन।
- कई क्षेत्रों में भूजल स्तर हर वर्ष 1-1.5 मीटर तक गिर रहा है।

2. भारत में जल संसाधनों से जुड़ी चुनौतियाँ

क. क्षेत्रीय असमानता

- पूर्वोत्तर भारत में जल की प्रचुरता और पश्चिमी भारत में जल की कमी।
- नदियों का प्रवाह असमान – कुछ नदियाँ बारहमासी (Perennial) और कुछ मौसमी।

ख. **जलवायु परिवर्तन**

- मानसून के पैटर्न में बदलाव।
- सूखा और बाढ़ की घटनाएँ अधिक।
- हिमालयी ग्लेशियरों का तेज पिघलना – गंगा और ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों के भविष्य पर खतरा।

ग. भूजल का अंधाधुंध दोहन

- ट्यूबवेल आधारित सिंचाई ने भूजल स्तर घटा दिया है।
- कई क्षेत्रों को "डार्क जोन" घोषित किया गया है जहाँ जल स्तर गंभीर रूप से नीचे जा चुका है।

घ. जल प्रदूषण

- औद्योगिक अपशिष्ट, घरेलू सीवेज और कृषि रसायनों से जल स्रोत प्रदूषित।
- गंगा, यमुना और साबरमती जैसी नदियों में प्रदूषण गंभीर समस्या।

च. सिंचाई अवसंरचना की समस्याएँ

- नहरों का रिसाव और रखरखाव की कमी।
- बाढ़ सिंचाई में पानी की भारी बर्बादी।
- छोटे और सीमांत किसानों के लिए आधुनिक तकनीकें महँगी।

छ. जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण

- प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता में निरंतर कमी।
- 1951 में यह 5177 घन मीटर थी, जो 2020 में घटकर 1500 घन मीटर से कम रह गई है।
- आने वाले समय में यह "जल तनाव" (Water Stress) की स्थिति को और बढ़ाएगी।

सिंचाई तकनीकें (Irrigation Techniques)

सिंचाई का अर्थ है – कृषि भूमि में फसलों की आवश्यकता के अनुसार समय पर पानी पहुँचाना। भारतीय कृषि में सिंचाई का महत्व अत्यधिक है क्योंकि यहाँ वर्षा का वितरण असमान और अनिश्चित है। सिंचाई तकनीकों को मुख्यतः दो भागों में बाँटा जा सकता है – परंपरागत (Traditional) और आधुनिक (Modern)

1. परंपरागत सिंचाई विधियाँ

क. कुआँ सिंचाई (Well Irrigation)

- भारत की सबसे पुरानी पद्धति।
- खुले कुएँ या नलकूप से बाल्टी, चरखी, रहट या पंप द्वारा पानी निकालकर खेत में पहुँचाया जाता है।
- लागत कम, परंतु जल उपयोग दक्षता (WUE) केवल 30-35%।

ख. तालाब व टैंक सिंचाई (Tank Irrigation)

- दक्षिण भारत, विशेषकर तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश में लोकप्रिय।
- वर्षा जल संग्रहित कर खेतों में उपयोग।
- छोटे किसानों के लिए उपयोगी, लेकिन सूखे की स्थिति में सीमित।

ग. नहर सिंचाई (Canal Irrigation)

- नदियों पर बाँध बनाकर पानी को नहरों के माध्यम से खेतों तक पहुँचाना।
- गंगा नहर, सतलुज-यमुना लिंक नहर इसके प्रमुख उदाहरण हैं।
- बड़ी जनसंख्या को सिंचाई सुविधा, लेकिन रिसाव और वाष्पीकरण से भारी जल हानि।

घ. बाढ़ सिंचाई (Flood Irrigation)

- खेत में पानी भरकर देना।

- सबसे अधिक प्रचलित, परंतु जल की भारी बर्बादी।
- केवल 30% पानी ही फसल उपयोग कर पाती है।

2. आधुनिक सिंचाई तकनीकें

क. ड्रिप इरिगेशन (Drip Irrigation)

- पाइप और ड्रिपर द्वारा फसलों की जड़ों में बूंद-बूंद पानी पहुँचाना।
- जल उपयोग दक्षता 70–90% तक।
- खरपतवार नियंत्रण, खाद का साथ में प्रयोग (Fertigation)।
- फल, सब्जियाँ, गन्ना और बागवानी फसलों के लिए उपयुक्त।

लाभ:

1. जल की 40–60% बचत।
2. उत्पादन में 25–50% वृद्धि।
3. भूमि का लवणीयकरण कम।

ख. स्प्रिंकलर इरिगेशन (Sprinkler Irrigation)

- पानी को पाइप और नोजल द्वारा वर्षा की तरह छिड़कना।
- हल्की व रेतीली भूमि और असमान सतह पर उपयुक्त।
- जल उपयोग दक्षता 50–60%।

लाभ:

1. मिट्टी का कटाव नहीं।
2. उर्वरक और कीटनाशक का छिड़काव आसान।
3. फसलों पर समान सिंचाई।

ग. सब-सर्फेस इरिगेशन (Sub-surface Irrigation)

- भूमिगत पाइप प्रणाली द्वारा सीधे जड़ों तक पानी पहुँचाना।
- वाष्पीकरण हानि नगण्य।
- जल उपयोग दक्षता 90% तक।
- प्रारंभिक लागत अधिक, परंतु दीर्घकालीन रूप से लाभकारी।

घ. स्मार्ट इरिगेशन (Smart Irrigation)

- सेंसर, मौसम पूर्वानुमान और स्वचालित नियंत्रण प्रणाली पर आधारित।
- मिट्टी की नमी सेंसर (Soil Moisture Sensors) के अनुसार स्वतः सिंचाई।
- ICT और IoT आधारित तकनीकें अब किसानों तक पहुँच रही हैं।

लाभ:

1. न्यूनतम पानी, अधिकतम उत्पादन।
2. श्रम और लागत की बचत।
3. जलवायु परिवर्तन की स्थिति में भी सटीक प्रबंधन।

3. सिंचाई तकनीकों की तुलना

तकनीक	जल उपयोग दक्षता (%)	लागत	उपयुक्त फसलें	विशेषताएँ
बाढ़ सिंचाई	30–35	कम	धान, गेहूँ	अधिक जल बर्बादी
नहर सिंचाई	40–45	मध्यम	सभी	बड़े क्षेत्रों के लिए
स्प्रिंकलर	50–60	मध्यम-उच्च	सब्जियाँ, अनाज	वर्षा जैसी सिंचाई
ड्रिप	70–90	उच्च	फल, सब्जियाँ, गन्ना	जल की भारी बचत
सब-सर्फेस	85–90	उच्च	उच्च मूल्य वाली फसलें	वाष्पीकरण नहीं
स्मार्ट इरिगेशन।	90+	अत्यधिक	सभी	स्वचालित, ICT आधारित

4. भारत में सिंचाई तकनीकों का विस्तार

- सरकार द्वारा प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) के अंतर्गत ड्रिप और स्प्रिंकलर को बढ़ावा।
- महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु और राजस्थान में ड्रिप सिंचाई का प्रयोग तेजी से बढ़ा।
- उत्तर प्रदेश और पंजाब में अभी भी पारंपरिक बाढ़ सिंचाई प्रचलित।
- धीरे-धीरे स्मार्ट और ICT आधारित तकनीकों का प्रयोग बढ़ रहा है।

इस प्रकार, आधुनिक सिंचाई तकनीकें जल संरक्षण और उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में क्रांतिकारी बदलाव ला रही हैं।

चुनौतियाँ और समाधान (Challenges and Solutions)

भारत में जल संसाधनों और सिंचाई तकनीकों की स्थिति का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि हमारे सामने अनेक गंभीर चुनौतियाँ हैं। यदि इन पर समय रहते ध्यान न दिया गया तो आने वाले समय में जल संकट और खाद्य सुरक्षा दोनों ही खतरे में पड़ सकते हैं। नीचे प्रमुख चुनौतियाँ और उनके संभावित समाधान प्रस्तुत किए गए हैं –

1. प्रमुख चुनौतियाँ

क. भूजल का अत्यधिक दोहन

- ✓ कृषि में ट्यूबवेल आधारित सिंचाई के कारण भूजल स्तर लगातार गिर रहा है।
- ✓ पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु जैसे राज्यों में स्थिति गंभीर है।
- ✓ कई क्षेत्रों को "डार्क जोन" घोषित किया गया है।

ख. **परंपरागत बाढ़ सिंचाई की प्रथा**

- ✓ आज भी लगभग 70% क्षेत्र में बाढ़ सिंचाई का प्रयोग।
- ✓ जल उपयोग दक्षता मात्र 30-35%।
- ✓ अधिक जल के प्रयोग से भूमि का लवणीयकरण और जलभराव।

ग. सिंचाई अवसंरचना की कमी

- ✓ नहरों की मरम्मत और रखरखाव का अभाव।
- ✓ जल वितरण में असमानता।
- ✓ रिसाव और वाष्पीकरण से जल हानि।

घ. किसानों में जागरूकता और प्रशिक्षण का अभाव

- ✓ सीमांत और छोटे किसान आधुनिक तकनीकों से परिचित नहीं।
- ✓ उच्च लागत और रखरखाव के कारण वे इन तकनीकों को अपनाने से हिचकते हैं।

च. जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

- ✓ मानसून के अनिश्चित पैटर्न के कारण सूखा और बाढ़ दोनों की समस्या।
- ✓ हिमालयी ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों पर संकट।

छ. नीतिगत और संस्थागत चुनौतियाँ

- ✓ जल संसाधनों पर राज्यों के बीच विवाद (जैसे कावेरी जल विवाद)।
- ✓ जल उपयोगकर्ता संघ (WUA) का कमजोर क्रियान्वयन।
- ✓ जल मूल्य निर्धारण (Water Pricing) का अभाव।

2. समाधान और सुधार के उपाय

क. जल संरक्षण को बढ़ावा

- ✓ वर्षा जल संचयन को अनिवार्य बनाना।
- ✓ खेत तालाब, चेक डैम और परकोलेशन टैंक का निर्माण।
- ✓ मल्चिंग और कृषि वानिकी जैसी तकनीकों का उपयोग।

ख. आधुनिक सिंचाई तकनीकों का प्रसार

- ✓ ड्रिप और स्प्रिंकलर को सब्सिडी पर उपलब्ध कराना।
- ✓ ICT और सेंसर आधारित स्मार्ट इरिगेशन का विकास।
- ✓ फर्टिगेशन और माइक्रो-इरिगेशन तकनीकों का प्रचार-प्रसार।

ग. नीतिगत पहल

- ✓ प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) और **"हर खेत को पानी"** कार्यक्रम का प्रभावी क्रियान्वयन।
- ✓ अंतर्राज्यीय जल विवादों का न्यायसंगत समाधान।
- ✓ जल उपयोगकर्ता संघ (WUA) को सशक्त बनाना।

घ. किसान जागरूकता और प्रशिक्षण

- ✓ कृषि विश्वविद्यालयों और कृषि विज्ञान केंद्रों (KVK) द्वारा प्रशिक्षण।
- ✓ ग्रामीण स्तर पर प्रदर्शन इकाइयाँ (Demonstration Units) स्थापित करना।
- ✓ किसानों को कम लागत वाली तकनीकों का उपयोग सिखाना।

च. फसल विविधीकरण (Crop Diversification)

- ✓ जल-गहन फसलों (धान, गन्ना) की जगह कम पानी वाली फसलें (दालें, तिलहन, मोटे अनाज)।
- ✓ Integrated Farming System (IFS) अपनाना।

छ. सामुदायिक और संस्थागत प्रबंधन

- ✓ जल उपयोगकर्ता समूह (Water Users Association) बनाकर सामूहिक प्रबंधन।

- ✓ **"एक गाँव – एक तालाब"** जैसी योजनाओं को बढ़ावा।
- ✓ स्थानीय स्तर पर जल पंचायतें गठित करना।

निष्कर्ष और सुझाव (Conclusion & Recommendations)

भारत की कृषि और अर्थव्यवस्था में जल संसाधनों का महत्व अत्यधिक है। परंतु वर्तमान परिस्थितियाँ बताती हैं कि जल संकट एक गंभीर चुनौती बनता जा रहा है। जहाँ एक ओर पूर्वोत्तर भारत में अत्यधिक वर्षा और बाढ़ की समस्या है, वहीं पश्चिमी भारत और दक्कन का पठारी क्षेत्र सूखे की मार झेलता है। इसी प्रकार, पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भूजल का अत्यधिक दोहन, दक्षिण भारत में नदी जल विवाद और शहरीकरण से बढ़ती जल माँग इस संकट को और जटिल बना रही है।

निष्कर्ष रूप में यह स्पष्ट है कि –

- ✓ भारत में जल संसाधन पर्याप्त हैं, लेकिन इनका वितरण असमान और उपयोग अव्यवस्थित है।
- ✓ पारंपरिक बाढ़ सिंचाई तकनीक जल की भारी बर्बादी करती है, जिससे जल उपयोग दक्षता घटती है।
- ✓ आधुनिक तकनीकें जैसे ड्रिप, स्प्रिंकलर और स्मार्ट इरिगेशन जल संरक्षण और उत्पादकता दोनों को बढ़ाती हैं।
- ✓ जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि और कृषि की बढ़ती आवश्यकताएँ जल संसाधन प्रबंधन को और चुनौतीपूर्ण बना रही हैं।

1. सुझाव (Recommendations)

क. तकनीकी सुधार

- सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों (Micro Irrigation) का विस्तार।
- सेंसर आधारित स्मार्ट इरिगेशन और ICT आधारित प्रबंधन।
- जल पुनर्चक्रण (Recycling) और पुनः उपयोग (Reuse) की प्रणाली।

ख. नीतिगत कदम

- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) को अधिक प्रभावी बनाना।
- जल उपयोगकर्ता संघों (WUA) को अधिकार और वित्तीय सहायता देना।
- अंतर्राज्यीय नदी जल विवादों का न्यायपूर्ण समाधान।

ग. किसानों की भागीदारी

- किसानों को प्रशिक्षण और प्रदर्शन इकाइयों द्वारा जागरूक करना।
- फसल विविधीकरण – कम पानी वाली फसलों को बढ़ावा।
- **"एक गाँव – एक जल संरचना"** अभियान चलाना।

घ. सामुदायिक व सामाजिक पहल

- वर्षा जल संचयन को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में अनिवार्य बनाना।
- जल संरक्षण को जन-आंदोलन का रूप देना।
- विद्यालय और विश्वविद्यालय स्तर पर **"जल साक्षरता"** (Water Literacy) कार्यक्रम।

समापन टिप्पणी

भविष्य की कृषि तभी स्थिर और सुरक्षित रह सकती है जब हम जल संसाधनों का संरक्षण करें और प्रत्येक बूंद का सदुपयोग करें। जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि की चुनौतियों को देखते हुए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम परंपरागत ज्ञान और आधुनिक तकनीक दोनों का संतुलित उपयोग करें।

"हर खेत को पानी, हर बूंद का सही उपयोग" केवल नारा नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ियों की खाद्य और जल सुरक्षा की गारंटी है।

****

ISSN: 3049-2211

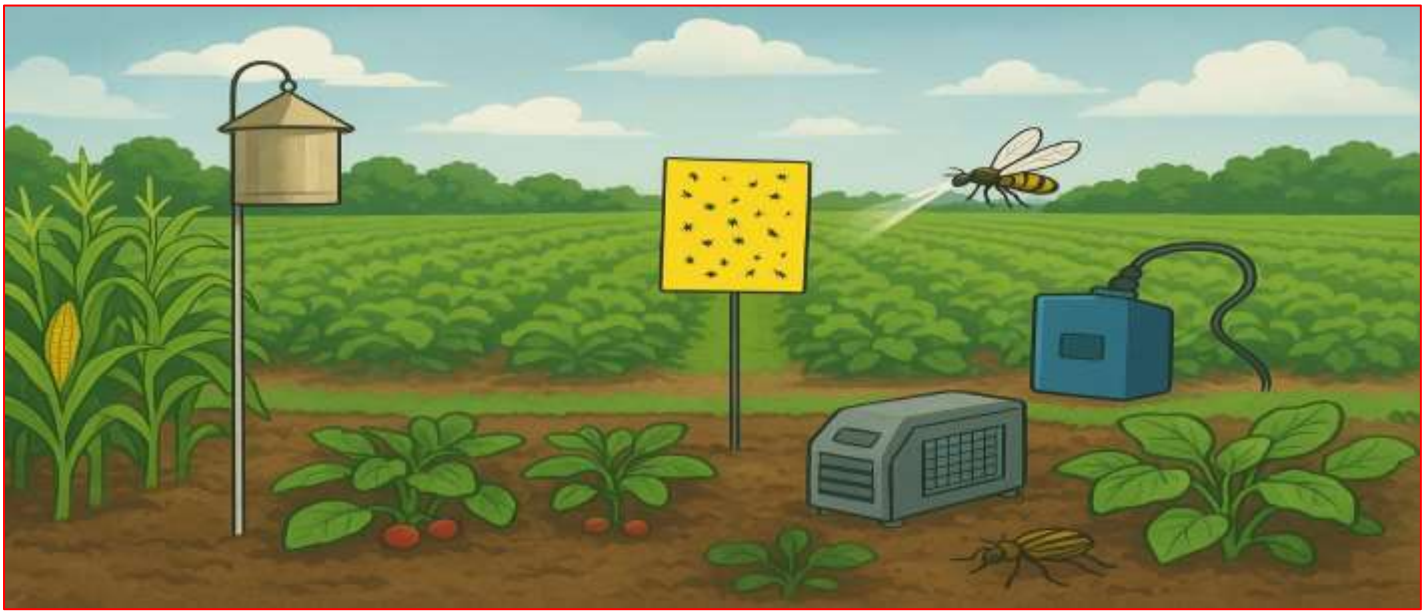

एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM)

कमलेश जाखड़, वैशाली दत्तुजी पिदुरकर
कृषि कीट विज्ञान
राजा बलवंत सिंह कॉलेज बिचपुरी, आगरा, उत्तर प्रदेश।

भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था की नींव है और बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की माँग लगातार बढ़ रही है। दूसरी ओर, फसलों पर कीट, बीमारियाँ और खरपतवार गंभीर चुनौतियाँ पैदा करते हैं, जिसके कारण वैश्विक स्तर पर अनुमानतः 20 से 40 प्रतिशत तक फसलें नुकसान का सामना करती हैं। केवल रासायनिक कीटनाशकों का सहारा लेना उचित समाधान नहीं है, क्योंकि उनका अत्यधिक प्रयोग पर्यावरण प्रदूषण, जैव विविधता में कमी और मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक असर डालता है। इन्हीं चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करने के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन (Integrated Pest Management – IPM) पद्धति विकसित की गई, जिसमें विभिन्न नियंत्रण विधियों का संयोजन कर फसल सुरक्षा सुनिश्चित की जाती है।

एकीकृत कीट प्रबंधन की परिभाषा

एकीकृत कीट प्रबंधन ऐसा वैज्ञानिक उपाय है, जिसमें सांस्कृतिक, यांत्रिक, जैविक और रासायनिक तरीकों का संतुलित उपयोग किया जाता है ताकि कीटों की संख्या आर्थिक क्षति स्तर से नीचे रहे और पर्यावरणीय संतुलन बना रहे।

FAO के अनुसार – "IPM एक स्थायी कीट प्रबंधन प्रणाली है, जो विभिन्न तकनीकों के मिश्रण से कीटों को नियंत्रित करती है और साथ ही मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण तथा आर्थिक स्थिरता को ध्यान में रखती है।

एकीकृत कीट प्रबंधन की आवश्यकता

- ✓ रासायनिक कीटनाशकों के अति प्रयोग से कीटों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है।
- ✓ लाभकारी कीट नष्ट हो जाते हैं, जिससे असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है।
- ✓ मिट्टी, पानी और वायु प्रदूषित होते हैं।
- ✓ कृषि उत्पादों में रासायनिक अवशेष उपस्थित रहते हैं, जो उपभोक्ताओं के लिए हानिकारक होते हैं।
- ✓ महंगे कीटनाशकों की खरीद और छिड़काव से किसानों का खर्च बढ़ जाता है।

✓ पारिस्थितिकी तंत्र व जैव विविधता को क्षति पहुँचती है।

एकीकृत कीट प्रबंधन के उद्देश्य

- फसलों की उत्पादकता और स्थिरता सुनिश्चित करना।
- रासायनिक कीटनाशकों की खपत कम करना।
- प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण का संरक्षण।
- किसानों की लागत घटाकर आय बढ़ाना।
- सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण खाद्य उपलब्ध कराना।
- सतत कृषि प्रणाली को बढ़ावा देना।

एकीकृत कीट प्रबंधन के सिद्धांत

निगरानी: खेतों में नियमित कीट गणना और क्षति का आकलन।

आर्थिक क्षति स्तर (ETL):- तभी नियंत्रण उपाय जब नुकसान आर्थिक दृष्टि से हानिकारक दिखे।

बहुविध दृष्टिकोण:- जैविक, सांस्कृतिक, यांत्रिक और रासायनिक तरीकों का संतुलित उपयोग।

प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण: लाभकारी कीटों को सुरक्षित रखकर उनका लाभ उठाना।

किसानों की सहभागिता: खेत स्तर पर प्रशिक्षण और जागरूकता।

एकीकृत कीट प्रबंधन की प्रमुख विधियाँ

(क) सांस्कृतिक विधियाँ (Cultural Methods)

समय पर बुवाई, फसल चक्र, प्रतिरोधी किस्में, खरपतवार नियंत्रण, संतुलित उर्वरक प्रबंधन।

(ख) यांत्रिक व भौतिक उपाय

फेरोमोन ट्रैप, लाइट ट्रैप, चिपचिपे कार्ड, हाथ से कीट नष्ट करना, नेट हाउस।

(ग) जैविक उपाय

लेडीबर्ड बीटल जैसे परभक्षी, ट्राइकोग्रामा परजीवी, विभिन्न सूक्ष्मजीव (*Bt, Beauveria, Metarhizium*), और नीम उत्पाद।

(घ) रासायनिक उपाय

अंतिम विकल्प के रूप में, कम विषैले और चयनात्मक कीटनाशकों का संतुलित प्रयोग।

एकीकृत कीट प्रबंधन में उपयोग होने वाले उपकरण

फेरोमोन ट्रैप, लाइट ट्रैप, पीला/नीला चिपचिपा कार्ड, जाल व नेट हाउस, स्प्रेयर एवं डस्टर।

फसलवार उदाहरण

धान– गहरी जुताई, Trichogramma का प्रयोग, नीम आधारित छिड़काव, आवश्यकता अनुसार रसायन।

गेहूँ– समय पर बुवाई, खरपतवार नियंत्रण, एफिड के लिए लेडीबर्ड बीटल।

कपास– Bt कपास, फेरोमोन ट्रैप से निगरानी, नीम तेल छिड़काव।

सब्जियाँ– पॉलीहाउस/नेट हाउस, पीले कार्ड, Beauveria जैसे जैविक उपाय।

एकीकृत कीट प्रबंधन के लाभ

✓ उत्पादन एवं गुणवत्ता में वृद्धि।
✓ लागत कम और किसानों की आय अधिक।
✓ पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा।
✓ मानव एवं पशु स्वास्थ्य सुरक्षित।
✓ दीर्घकालिक और सतत कृषि को बढ़ावा।

चुनौतियाँ

- किसानों में जागरूकता और प्रशिक्षण का अभाव।
- जैविक नियंत्रण साधनों की सीमित उपलब्धता।
- प्रारंभिक लागत अपेक्षाकृत अधिक होना।
- नए कीट समूहों का उद्भव।
- नीतिगत समर्थन और विस्तार सेवाओं की कमी।

भविष्य की संभावनाएँ

- बड़े पैमाने पर जैविक कीटनाशकों और जैव एजेंट का उत्पादन।
- मोबाइल ऐप, ड्रोन आधारित फसल निगरानी।
- फसल-विशिष्ट IPM पैकेज।
- किसान प्रशिक्षण व सरकारी प्रोत्साहन योजनाएँ।

निष्कर्ष

एकीकृत कीट प्रबंधन आज की कृषि के लिए अपरिहार्य है। यह पद्धति पर्यावरण-अनुकूल होने के साथ किसानों की आय बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में प्रभावी है। यदि इसे व्यापक स्तर पर अपनाया जाए तो कृषि को रसायन-निर्भरता से मुक्त कर टिकाऊ और संतुलित दिशा दी जा सकती है।■

जीरो बजट प्राकृतिक खेती और कृषि तंत्र में मौजूद जैव विविधता के बीच गहरा आपसी संबंध

डॉ. अनिल कुमार*, डॉ.सुभाष वर्मा, मंजुल जैन
सहायक प्रोफेसर
कृषि विद्यालय, एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह, मध्य प्रदेश।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती और एग्रीनॉमी में जैव विविधता आपस में गहराई से जुड़ी हुई हैं, जो सतत और लचीले कृषि तंत्र को बढ़ावा देती हैं। प्राकृतिक खेती, जिसे सुभाष पालेकर ने विकसित किया, रासायनिक मुक्त खेती पर बल देता है और क्षेत्रीय उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करता है, जैसे कि जीवामृत, बीजामृत, मल्चिंग और व्हेपसें। ये सभी प्रथाएँ मृदा सूक्ष्मजीव विविधता बढ़ाती हैं, मृदा स्वास्थ्य को अच्छा बनाती हैं और लाभकारी कीटों, पक्षियों और वन्यजीवों के साथ-साथ उपरी जैव विविधता को भी समर्थन प्रदान करती हैं। पारिस्थितिक संतुलन को बढ़ावा देने के साथ, प्राकृतिक खेती कीट और रोगों की घटना को कम करता है, पोषक तत्व चक्रण को उचित बनाता है और परागण, जल संरक्षण और कार्बन संचयन जैसी पारिस्थितिक सेवाओं को बढ़ावा देता है। प्राकृतिक खेती और जैव विविधता के सिद्धांतों का एकीकरण उत्पादक, पर्यावरण-सतत और आर्थिक रूप से व्यवहार्य कृषि तंत्र बनाता है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती

प्राकृतिक खेती एक पारिस्थिक और लागत-कुशल खेती दृष्टिकोण है, जिसे सुभाष पालेकर द्वारा विकसित किया गया है। इसका प्राथमिक लक्ष्य बाहरी इनपुट कॉस्ट को शून्य तक कम करना है। यह प्रणाली रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग बंद करती है और मिट्टी की उर्वरकता और फसल उत्पादन में स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करती है। प्राकृतिक खेती के प्रमुख घटक हैं:

1. **जीवामृत** – एक किण्वित सूक्ष्मजीव संस्कृति जो मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों को बढ़ाती है।
2. **बीजामृत** – बीजों को मिट्टी रोगों से सुरक्षित रखने का मिश्रण।
3. **मल्चिंग** – मिट्टी को कार्बनिक पदार्थ से ढकना ताकि नमी बनी रहे, मिट्टी की संरचना सुधरे और खरपतवार कम हो।
4. **व्हापसा** – मिट्टी में पर्याप्त वायुसंचार और संतुलित नमी बनाए रखने की प्रक्रिया।

जैव विविधता सस्य विज्ञान में:

जैव विविधता मृदा सूक्ष्मजीव, पौधे, कीट, पक्षी और स्तनधारी जीवों में शामिल हैं। यह मृदा उर्वरकता बनाए रखना, परागण में मदद करना, कीटों को नियंत्रित करना और पारिस्थितिकी तंत्र को स्थिर करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

आपसी संबंध

प्राकृतिक खेती और जैव विविधता आपस में गहरे जुड़े हुए हैं। रासायनिक मुक्त प्रथाओं, कार्बनिक इनपुट और फसल विविधीकरण को

बढ़ावा देकर, प्राकृतिक खेती सूक्ष्मजीवों, लाभकारी कीटों और अन्य जीवों के लिए अनुकूल आवास तैयार करता है। यह पारिस्थितिक संतुलन कृषि तंत्र में लचीलापन, सततता और दीर्घकालिक उत्पादन क्षमता बढ़ाता है।

प्राकृतिक खेती में मृदा जैव विविधता

सूक्ष्मजीव जीवन का संवर्धन

जीरो बजट नैचुरल फार्मिंग (ZBNF) पर्यावरण पर लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और सक्रियता को अधिक कर देता है जिससे मृदा जैव विविधता का योगदान महत्वपूर्ण हो जाता है। जीवामृत का उपयोग, गोबर, गौ मूत्र, गुड़, दाल का आटा और मिट्टी से तैयार किण्वित सूक्ष्मजीव संस्कृति, बैक्टीरिया, फंगस और एक्टिनोमाइसेट्स की मात्रा बढ़ाता है जो मिट्टी में पैदा होता है। ये सूक्ष्मजीव पोषक तत्व चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं, खासकर नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उपलब्धता और स्थिरीकरण में जो पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक हैं। सक्रिय सूक्ष्मजीव प्रणाली जैविक अवशेषों का अपघटन भी बेहतर बनाती है जिससे पोषक तत्व धीरे-धीरे और स्थायी तरीके से रिलीज़ होते हैं।

कार्बनिक पदार्थ की भूमिका

मल्चिंग और फसल अवशेषों का मिश्रण मिट्टी में कार्बनिक कार्बन और ह्यूमस की परिस बढ़ाता है। यह कार्बनिक पदार्थ मिट्टी के जीव को जैसे केंचुएँ, नेमाटोड आदि को भोजन और आवास प्रदान करता है। यह जीव मिट्टी की संरचना, छिद्रता और वायुसंचार में सुधार करता है और मिट्टी की जल धारण करने की क्षमता भी बढ़ाता है।

मृदा स्वास्थ्य के लाभ

प्राकृतिक खेती प्रथाएँ मृदा रोगों को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित करती हैं, क्योंकि ये संतुलित सूक्ष्मजीव पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देती हैं। कार्बनिक इनपुट के नियमित उपयोग से मिट्टी की काटियन एक्सचेंज क्षमता (CEC) बढ़ती है, जिससे पोषक तत्वों का भंडारण और उपलब्धता सुधरती है, और रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है।

पर्यवेक्षण

उत्तर प्रदेश और कर्नाटक में किए गए क्षेत्रीय अध्ययन से यह पता चला है कि प्राकृतिक खेती में मृदा सूक्ष्मजीव विविधता पारंपरिक प्रणालियों की तुलना में अधिक होती है, जिससे मिट्टी स्वस्थ, लचीली और दीर्घकालिक स्थायी फसल उत्पादन के लिए सक्षम बनती है।

प्राकृतिक खेती में उपरी जैव विविधता

फसल विविधीकरण

प्राकृतिक खेती में फसल चक्रीकरण और इंटरक्रॉपिंग के माध्यम से फसल विविधीकरण को बढ़ावा दिया जाता है, जो प्रजाति और जीन विविधता को बनाए रखता है। विविध फसल पैटर्न न केवल मिट्टी की उर्वरकता और पोषक तत्व उपलब्धता को बेहतर करते हैं, बल्कि कीट और रोगों की घटनाओं को भी घटाते हैं क्योंकि यह कीटों के जीवन चक्र को असंगठित करता है और एकल फसल से संबंधित जोखिमों को कम करता है।

फायदेमंद कीट

प्राकृतिक खेती में रासायनिक कीटनाशकों का इस्तेमाल न होने कारण शिकारी कीट, परागक और पैरासाइटॉइड जीव की संख्या बढ़ सकती है। ये कीट प्राकृतिक कीट नियंत्रण में महत्वपूर्ण होते हैं और रासायनिक कीटनाशकों पर अपनी निर्भरता कम करते हैं। मधुमक्खी और तितलियाँ जैसे परागक फूलों का परागण, फलों का विकास और बीज उत्पादन में बढ़ावा देते हैं, जबकि लेडीबग, मकड़ियाँ और अन्य शिकारी कीट कीट आबादी को प्राकृतिक माध्यम से नियंत्रित करते हैं।

पक्षियों और वन्यजीव

प्राकृतिक खेती की मल्टी-क्रॉपिंग और आवास-अनुकूल प्रथाएँ पक्षियों और छोटे स्तनधारियों के लिए आवास और भोजन के क्षेत्र तैयार करती हैं। पक्षी कीटों का शिकार करके प्राकृतिक नियंत्रण प्रदान करते हैं और बीज फैलाव में भी मदद करते हैं, जिससे पौधों की विविधता बढ़ती है। छोटे स्तनधारी मिट्टी की वायुसंचार में मदद करते हैं और पोषक तत्व चक्रण में योगदान देते हैं।

परिणाम

स्टडीज और प्रिक्षेत्र अध्ययनों से यह पता चला है कि प्राकृतिक खेती अपनाने के खेतों में पक्षियों, कीटों और अन्य वन्यजीवों की अधिकता होती है, जिससे संतुलित और लचीला पारिस्थितिकी तंत्र बन जाता है। फसल विविधीकरण, बढ़ी संख्या में लाभकारी कीटों और वन्यजीवों की उपस्थिति के एकत्र उत्साहन से कृषि पारिस्थितिकी सेवाओं में सुधार होता है, जिससे प्राकृतिक खेती सतत और जैव विविधता-हितैषी कृषि के लिए कारगर रणनीति बन जाता है।

प्राकृतिक खेती और पारिस्थितिकी सेवाएँ

कीट और रोग प्रबंधन

जीरो बजट प्राकृतिक खेती पारिस्थितिकी आधारित कीट और रोग प्रबंधन को मजबूत करने में मदद करता है। जैव विविधता को बढ़ावा देकर, प्राकृतिक खेती शिकारी कीटों, पक्षियों और लाभकारी सूक्ष्मजीवों

ISSN: 3049-2211

की आबादी को बढ़ावा देता है, जो प्राकृतिक तरीके से कीटों को नियंत्रित करते हैं और रोगों की घटना को घटाते हैं। इसके अतिरिक्त, जीवामृत जैसी जैव-तैयारी पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है, जिससे फसलें रासायनिक कीटनाशकों के बिना भी जीवाणु और कीटजनित तनावों के प्रति अधिक सहनशील हो जाती हैं। यह एक स्वयं-संतुलित कृषि प्रणाली बनाता है, जो कीट और रोगों से होने वाले नुकसान को घटाता है और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखता है।

पारिस्थितिकी सेवाएँ

प्राकृतिक खेती सतत कृषि के लिए आवश्यक विभिन्न पारिस्थितिकी सेवाओं में योगदान करता है:

1.परागण: विविध फूलों वाली फसलें और कीटनाशकों का कम उपयोग मधुमक्खियों, तितलियों और अन्य परागक जीवों को आकर्षित करता है, जिससे फलों और बीजों का उत्पादन बढ़ता है।

2.पोषक तत्व चक्रण: सक्रिय मिट्टी सूक्ष्मजीव जैविक पदार्थों को तोड़ते हैं और पौधों के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और सूक्ष्म पोषक तत्वों को उपलब्ध बनाते हैं।

3.कार्बन संचयन: मल्चिंग और फसल अवशेषों का मिश्रण मिट्टी में कार्बनिक कार्बन बढ़ाता है, जिससे दीर्घकालिक कार्बन भंडारण और जलवायु संरक्षण में मदद मिलती है।

4.जल धारण क्षमता: स्वस्थ और जैविक रूप से सक्रिय मिट्टी जल को प्रभावी ढंग से धारण करती है, सूखा प्रतिरोध बढ़ाती है और सिंचाई की आवश्यकता कम करती है।

पर्यावरणीय प्रभाव

प्राकृतिक खेती में रासायनिक इनपुट न होने के कारण मिट्टी और जल प्रदूषण कम होता है, लाभकारी जीव सुरक्षित रहते हैं और दीर्घकालिक पर्यावरणीय सततता बढ़ती है। जैव विविधता और पारिस्थितिकी सेवाओं का सम्मिलित प्रभाव कृषि तंत्र को उत्पादक, लचीला और पारिस्थितिकी रूप से संतुलित बनाता है।

प्राकृतिक खेती के कृषि और आर्थिक लाभ

फसल उत्पादन

प्राकृतिक खेती मिट्टी की गुणवत्ता, जैव विविधता और पोषक तत्व उपलब्धता बढ़ाकर सतत फसल उत्पादन में सहायक है। सुधरी मिट्टी संरचना और सूक्ष्मजीव सक्रियता मजबूत जड़ विकास और पोषक तत्वों के अच्छे अवशोषण को बढ़ाती है, जिससे प्राकृतिक खेती प्रणाली पारंपरिक तरीकों के मुकाबले फसल उत्पादकता को बनाए रखती या थोड़ी बढ़ा सकती है। मल्टी-क्रॉपिंग और फसल चक्रीकरण विविध उत्पादन सुनिश्चित करते हैं और कीट, रोग और चरम मौसम की घटनाओं के खतरों को कम करते हैं।

इनपुट लागत में कमी

एक मुख्य फायदा जो प्राकृतिक खेती प्रदान करता है वह है रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की लागत को समाप्त करना। किसान इसके स्थान पर बाजार में सस्ते और आसानी से उपलब्ध स्थानीय उपलब्ध कार्बनिक संसाधनों का उपयोग करते हैं, जैसे कि गोबर, गौ मूत्र और फसल अवशेष। इससे कुल उत्पादन लागत में महत्वपूर्ण कमी होती है और उत्पादन बनाए रखते हुए प्रणाली को अत्यधिक लागत-कुशल बनाया जाता है।

लाभप्रदता

कम लागत और बढ़ी हुई मिट्टी उर्वरकता और प्राकृतिक कीट नियंत्रण जैसी पारिस्थितिकी सेवाओं के कारण प्राकृतिक खेती अपनाने वाले किसानों को ज्यादा शुद्ध लाभ होता है। एक अध्ययन कहता है कि प्राकृतिक खेती अपनाने वाले किसान आम तौर पर 15-25% ज्यादा लाभ हासिल करते हैं, जो आर्थिक सततता को प्रमाणित करता है।

बाजार की संभावनाएँ

रासायनिक मुक्त, जैव विविधता-अनुकूल और पर्यावरण-सतत उत्पादों की मांग बढ़ने से ZBNF उत्पादों को उच्च मूल्य और संभावित निर्यात अवसर प्राप्त होते हैं, जिससे किसानों की आय भी बढ़ती है।

अपनाना, नीतिगत समर्थन और चुनौतियाँ

सरकारी समर्थन

भारत सरकार ने प्राकृतिक खेती को पारंपरिक खेती का सतत विकल्प मान्यता दी है। नेशनल मिशन ऑन नेचुरल फार्मिंग (NMNF) के तहत पूरे देश में ZBNF को बढ़ावा दिया जा रहा है। इस मिशन के तहत प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्बनिक इनपुट के लिए सब्सिडी और विस्तार सेवाएँ दी जाती हैं, जिससे किसान ZBNF प्रथाओं को सफलतापूर्वक अपनाने के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल प्राप्त कर सकें। इन पहलों

का उद्देश्य रासायनिक इनपुट पर निर्भरता कम करना, किसान की लाभप्रदता को बढ़ाना और पारिस्थितिक सततता को बढ़ावा देना है।

राज्य-स्तरीय सफलता

राज्य-स्तरीय प्राकृतिक खेती अपनाने में अग्रणी बनकर उभरे हैं। आंध्र प्रदेश में 5 लाख से अधिक किसान ZBNF प्रथाओं को अपना रहे हैं, जिससे मृदा सूक्ष्मजीव विविधता, मिट्टी की उर्वरता और पक्षियों की संख्या में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। कर्नाटक ने प्राकृतिक खेती को राज्य की कृषि नीतियों में शामिल किया है और प्रशिक्षण कार्यक्रम, प्रदर्शन खेत और निगरानी पहल आयोजित किए हैं ताकि सफल अपनाने को सुनिश्चित किया जा सके। ये राज्य-स्तरीय कार्यक्रम यह दिखाते हैं कि समन्वित नीतिगत समर्थन बड़े पैमाने पर ZBNF अपनाने में सहायक हो सकता है और जैव विविधता तथा पारिस्थितिकी स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सकता है।

चुनौतियाँ

प्राकृतिक खेती के लाभों के बावजूद, इसे अपनाने में कुछ चुनौतियाँ हैं। प्रारंभिक संक्रमण काल में किसानों के प्रशिक्षण, धैर्य और नई तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता होती है। प्राकृतिक खेती उत्पादों के बाजार तक पहुँच और प्रमाणन सीमित हैं, जो आय की संभावनाओं को प्रभावित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, लगातार अनुसंधान और स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार प्रयोग आवश्यक हैं ताकि विभिन्न मिट्टी प्रकार, जलवायु और फसल प्रणालियों के लिए प्राकृतिक खेती तकनीकों का अनुकूलन किया जा सके। इन चुनौतियों का समाधान करना आवश्यक है ताकि प्राकृतिक खेती को बड़े पैमाने पर अपनाया जा सके और इसके पारिस्थितिक और आर्थिक लाभ अधिकतम हो सकें।

भविष्य की संभावनाएँ और सिफारिशें

प्राकृतिक खेती का विस्तार

प्राकृतिक खेती का भविष्य इसे विभिन्न कृषि-परिस्थितिकी क्षेत्रों में व्यापक रूप से अपनाने में निहित है। इसके विस्तार के लिए किसान क्षेत्रीय विद्यालय, प्रदर्शन खेत और सामुदायिक शिक्षा केंद्र स्थापित करने की आवश्यकता है, जहाँ किसान प्राकृतिक खेती तकनीकों का प्रत्यक्ष अवलोकन और अभ्यास कर सकें। ये प्लेटफ़ॉर्म ज्ञान का प्रचार करते हैं, संकोच कम करते हैं और प्राकृतिक कृषि अपनाने में आत्मविश्वास बढ़ाते हैं। साथ ही, वित्तीय प्रोत्साहन जैसे कम ब्याज वाले ऋण, इनपुट सब्सिडी और कार्बनिक इनपुट उत्पादन के समर्थन से किसान पारंपरिक प्रणालियों से प्राकृतिक खेती में संक्रमण कर सकते हैं। इस प्रकार विस्तार न केवल पारिस्थितिक सततता को बढ़ावा देता है बल्कि किसानों की आय और लाभप्रदता भी बढ़ता है।

अनुसंधान प्राथमिकताएँ

विभिन्न फसल प्रणालियों के लिए प्राकृतिक खेती को अनुकूलित करने हेतु निरंतर अनुसंधान आवश्यक है। अनुसंधान सूक्ष्मजीव-पौधा-मिट्टी इंटरैक्शन, मिट्टी की उर्वरता और जैव विविधता पर दीर्घकालिक प्रभाव, और ZBNF का पारिस्थितिकी सेवाओं जैसे परागण, कीट नियंत्रण और कार्बन संचयन पर प्रभाव पर केंद्रित होना चाहिए। इन परिणामों का निरंतर मॉनिटरिंग सर्वोत्तम प्रथाओं के लिए साक्ष्य प्रदान करता है और स्थानीय मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के अनुसार तकनीकों को परिष्कृत करता है। मल्टी-क्रॉपिंग सिस्टम, फसल चक्रीकरण और कार्बनिक संशोधन को जोड़कर प्राकृतिक खेती प्रणाली की उत्पादकता और लचीलापन और बढ़ाया जा सकता है।

नीतिगत सिफारिशें

दीर्घकालिक सफलता के लिए, प्राकृतिक खेती और जैव विविधता उद्देश्यों को राष्ट्रीय और राज्य कृषि नीतियों में शामिल किया जाना चाहिए। सरकारों को जैव विविधता-अनुकूल और रासायनिक मुक्त उत्पादों के लिए प्रमाणन प्रणाली का समर्थन करना चाहिए ताकि बाजार मान्यता और पहुंच सुनिश्चित हो। अनुसंधान संस्थानों, विस्तार सेवाओं और किसान संगठनों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने वाली नीतियाँ ज्ञान हस्तांतरण और बड़े पैमाने पर अपनाने में सहायक होंगी। साथ ही, प्राकृतिक खेती को जलवायु लचीलापन और सततता लक्ष्यों के साथ जोड़ना इसे भविष्य के लिए तैयार कृषि की प्रमुख रणनीति बना सकता है, जो पारिस्थितिक संतुलन, आर्थिक व्यवहार्यता और सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करता है।

निष्कर्ष

व्यावहारिक विस्तार रणनीतियों, लक्षित अनुसंधान और सहायक नीतिगत ढांचे को मिलाकर, प्राकृतिक खेती पारंपरिक कृषि को सतत और जैव विविधता-अनुकूल प्रणाली में बदलने की क्षमता रखता है। इसका अपनाना भविष्य की पीढ़ियों के लिए उत्पादक, लचीला और पर्यावरण-सतत कृषि सुनिश्चित कर सकता है।■

ISSN: 3049-2211

अरुणाचल प्रदेश में ओक वृक्ष संसाधनों के माध्यम से एक्वेरियम मछली की देखभाल पर स्वदेशी तकनीकी ज्ञान

विपिन कुमार मिश्रा- कृषि विज्ञान केंद्र, पूर्वी कामेंग, अरुणाचल प्रदेश।
टी.एस. मिश्रा- कृषि विज्ञान केंद्र पश्चिम कामेंग, अरुणाचल प्रदेश।
ए.एन. त्रिपाठी- कृषि विज्ञान केंद्र तवांग, अरुणाचल प्रदेश।
पेमा खांडू थुंगन- जिला मत्स्य विकास कार्यालय बोमडिला, पश्चिम कामेंग जिला अरुणाचल प्रदेश।
देवेश तिवारी- बागवानी विभाग, नॉर्थ ईस्ट हिल यूनिवर्सिटी (एनईएचयू), तुरा कैंपस, मेघालय।
महेश पाठक- फसल सुरक्षा स्कूल, स्नातकोत्तर अध्ययन महाविद्यालय, केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय मेघालय।

स्वदेशी ज्ञान से तात्पर्य उस ज्ञान से है जो किसी क्षेत्र के विशिष्ट समुदाय के लोगों द्वारा अपने जीवन और आजीविका की बेहतरी के लिए समय के साथ विकसित किया गया है और यह स्थानीय संस्कृति, रीति-रिवाज, उपलब्ध संसाधन और पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुरूप अनुभव पर आधारित है। स्वदेशी तकनीकी ज्ञान केवल सूचना नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और पर्यावरणीय आयामों को समाहित करने वाली एक जटिल प्रणाली है और यह एक विशिष्ट पर्यावरण और एक विशेष समुदाय की स्थितियों से गहराई से जुड़ा हुआ है। यह पारिस्थितिक समझ, संरक्षण और जलवायु परिवर्तन जैसे पर्यावरणीय परिवर्तनों के अनुकूल ढलने के लिए बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। ये जीवन निर्वाह, शिल्प, भूमि प्रबंधन और संसाधन उपयोग से संबंधित पारंपरिक कौशल हैं। इस संदर्भ में, विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में ओक वृक्ष संसाधनों (ओटीआर) पर विशेष ध्यान देते हुए स्वदेशी सामग्रियों का उपयोग करके एक्वेरियम मछली पर्यावरण के प्रबंधन के लिए स्वदेशी तकनीकी ज्ञान पर एक अध्ययन किया गया है। यह ज्ञान विभिन्न जनजातीय समुदायों से ओक वृक्षों वाले जिलों में उचित सर्वेक्षण के माध्यम से प्राप्त किया गया, जिसमें स्वदेशी सामग्रियों का उपयोग करके एक्वेरियम मछली पालन कौशल के संदर्भ में जानकारी दी गई।

ओक वृक्ष और मछली की देखभाल

ओक वृक्ष मुख्य रूप से उच्च ऊंचाई पर शीतोष्ण पर्णपाती जंगलों में पाए जाते हैं; वे समशीतोष्ण जलवायु में पनपते हैं, कुछ छाया सहन कर सकते हैं लेकिन सूर्य के प्रकाश को पसंद करते हैं, और दुनिया के विभिन्न भागों में चौड़ी पत्ती वाले जंगलों की एक विशिष्ट विशेषता हैं। अरुणाचल प्रदेश के पश्चिमी कामेंग ज़िले, तवांग, पश्चिमी सियांग और

ISSN: 3049-2211

ऊपरी सुबनसिरी ऐसे ज़िले हैं जहाँ ओक के पेड़ों की वृद्धि के लिए अच्छी जलवायु परिस्थितियाँ हैं। मुख्य रूप से सूखी पत्तियाँ, बलूत के फल और छाल रहित दृढ़ लकड़ी की शाखाएँ एकत्र की जाती हैं और उन्हें सजावटी एक्वैरियम में मछलियों के छिपने के लिए उपयुक्त स्थान प्रदान करने हेतु टैंकों में डाला जाता है। इससे बायो-फिल्म की वृद्धि को बढ़ावा मिलता है और टैनिन निकलता है जो पानी को शुद्ध करता है।

एक्वेरियम में उपयोग के लिए ओक के पेड़ के संसाधनों को कैसे तैयार करें

मछलीघर/एक्वेरियम में ओक के पेड़ के संसाधनों का सुरक्षित उपयोग करने के लिए, ज़मीन के प्रदूषण से बचने के लिए शाखाओं से पत्तियों को काटकर उचित तरीके से इकट्ठा करना चाहिए, या ज़मीन से सूखी पत्तियों और बलूत के फल के आवरणों को इकट्ठा करके उन्हें उचित तरीकों से तैयार करना चाहिए ताकि दूषित या हानिकारक पदार्थ न आएँ, उसके बाद ही हम तैयार संसाधनों का उपयोग कर सकते हैं। इसे सही तरीके से करने का तरीका नीचे बताया गया है:

i) पत्तियों की कटाई:

पतझड़ के मौसम में हमें प्राकृतिक रूप से गिरे सूखे, भूरे पत्तों को इकट्ठा करना चाहिए।

ii) मृत और सूखी लकड़ी का संग्रह:

ताज़ी या हरी लकड़ी का उपयोग न करें, क्योंकि इससे रस और शर्करा निकल सकती है जो पानी को दूषित कर देती है।

iii) छाल की पट्टियाँ:

लकड़ी से सारी छाल हटा दें, क्योंकि यह पानी में जल्दी सड़ जाती है।

iv) सफाई:

एकत्रित सामग्री (पत्तियाँ, टोपियाँ, शाखाएँ) को कई मिनट तक उबालकर किसी भी रोगाणु या संभावित परजीवी को हटा दें, जिससे रोगाणु और परजीवी नष्ट हो जाएँ।

v) सुखाना:

उबालने के बाद, पत्तियों और अन्य सामग्रियों को एक्वेरियम में डालने से पहले कुछ दिनों तक पूरी तरह सूखने दें।

vi) उपयोग के लिए लकड़ी को भिगोना:

शाखाओं को तैरने से रोकने के लिए उन्हें लंबे समय तक भिगोने (कम से कम एक सप्ताह) की आवश्यकता हो सकती है। इसलिए लकड़ी को कई हफ़्तों तक या तब तक भिगोना चाहिए जब तक कि उसमें पानी इतना न भर जाए कि वह डूबने लगे। इससे अतिरिक्त टैनिन भी निकल जाता है, जो पानी को दागदार बना सकता है।

मछलियों के लिए ओक वृक्ष संसाधनों के लाभ:

क) छिपने के लिए आवास प्रदान करने हेतु उपयोग:

पत्तियां, टोपियां और लकड़ी प्राकृतिक छिपने के स्थान प्रदान करती हैं और मछलियों में तनाव को कम करने में मदद करती हैं।

ख) जैव-फिल्म निर्माण:

प्रयुक्त ओक पादप सामग्री सतह क्षेत्र बनाती है जो लाभकारी जैव-फिल्म का समर्थन करती है, जो एक्वेरियम मछलियों और अकशेरुकी जीवों के लिए एक महत्वपूर्ण खाद्य स्रोत बन जाती है।

ग) जल कंडीशनिंग में उपयोग:

ओक के पौधे की सामग्री पानी में टैनिन छोड़ती है, जिससे कुछ प्रजातियों के लिए अधिक प्राकृतिक आवास बनता है और टैंक के पानी की गुणवत्ता में सुधार होता है।

घ) प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए उपयोग:

ओक के पत्तों और लकड़ी द्वारा छोड़े गए टैनिन कुछ मछलियों की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं।

निष्कर्ष:

अरुणाचल प्रदेश के विभिन्न जनजातीय समुदायों का स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) सामान्यतः जनजातीय समुदायों की बुद्धिमत्ता, कौशल, नवाचारों, संसाधनशीलता और सामाजिक-आर्थिक स्थिति को दर्शाता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के मत्स्य पालन पर उपलब्ध यह आईटीके मत्स्य पालन क्षेत्र के सतत प्रबंधन में अपार संभावनाएँ रखता है, इसलिए इसे पूर्वोत्तर भारत में मत्स्य पालन क्षेत्र के पर्यावरण-अनुकूल और सतत विकास हेतु स्थान-विशिष्ट प्रबंधन योजनाएँ तैयार करने के लिए एक आवश्यक तत्व माना जाना चाहिए।■

ISSN: 3049-2211

पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश में वर्ष भर पशुपालन: किसानों की मासिक मार्गदर्शिका

रोहित वशिष्ठ, कमल किशोर, श्रिया गुप्ता, हिमानी शर्मा एवं ऋषभ शर्मा
वन संवर्धन एवं कृषि वानिकी विभाग
डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौणी, सोलन (हि.प्र.)।

हिमाचल प्रदेश में ग्रामीण आजीविका के लिए पशुपालन एक महत्वपूर्ण आधार है खास तौर पर इसके पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ विविध कृषि-जलवायु परिस्थितियाँ खेती के तरीकों को प्रभावित करती हैं। यह लेख पशुधन प्रबंधन के लिए एक व्यापक वर्ष भर की मार्गदर्शिका प्रदान करता है जो विशेष रूप से हिमाचल प्रदेश की अनूठी स्थलाकृति, मौसमी विविधताओं और चारे की उपलब्धता के अनुरूप है। यह जलवायु स्वरूप, चारा संसाधनों और पशुधन उत्पादकता के बीच जटिल संबंधों की जांच करता है और पशु स्वास्थ्य, पोषण और उत्पादन को अनुकूलित करने के लिए दिशा - निर्देश प्रदान करता है। यह कैलेंडर स्वदेशी ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक प्रथाओं के साथ एकीकृत करता है तथा प्रभावी भोजन, बीमारी की रोकथाम, प्रजनन कार्यक्रम और चारा संरक्षण के लिए रणनीतियों पर प्रकाश डालता है। इस कैलेंडर में कठोर सर्दियों, सीमित चरागाह संसाधनों और पशुधन पालन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव जैसी चुनौतियों को भी संबोधित किया गया है। इस कैलेंडर को अपनाकर, किसान संसाधनों का बेहतरीन उपयोग कर सकते हैं दूध की पैदावार बढ़ा सकते हैं और समग्र पशुधन उत्पादकता में सुधार कर सकते हैं।

1) जनवरी

- ✓ प्रदेश की उच्च पर्वतीय श्रृंखलाओं पर होने वाली बर्फबारी के कारण तापमान में गिरावट दर्ज की जाती है। अतः पशुओं को शीतलहर से बचाने हेतु निम्नलिखित उपाय करना आवश्यक है।
- ✓ कमजोर रोगी पशु, बछड़ों तथा बछड़ियों को जूट की बोरियों से ढक दें। इसके अतिरिक्त रात के दौरान, सभी जानवरों को एक ढके हुए आश्रय में बांधा जाना चाहिए।

- ✓ ठंडी हवाओं से पशुओं का बचाव करें तथा पशुओं को सूखे तथा गर्म स्थान पर रखें।
- ✓ धूप निकलने पर पशुओं को पूरे दिन धूप में रखें क्योंकि सूर्य की किरणें विटामिन-डी का उच्च स्रोत है तथा यह पशुओं के शरीर के तापमान को भी नियंत्रित रखती हैं।
- ✓ जानवरों को वाह्यपरजीवी से बचाने के लिए, उनके पशुशाला को साफ रखना चाहिए। बणा, तुलसी या लेमन घास के गुलदस्ते पशुशाला में लटकाए जाने चाहिए, जिसकी गंध वाह्यपरजीवी को दूर रखती है।
- ✓ शेड को साफ रखने के लिए नीम के तेल पर आधारित कीटाणुनाशक का छिड़काव करना चाहिए।
- ✓ यदि पशुओं को खुरपका मुंहपका रोग (FMD) के खिलाफ अभी तक टीका नहीं लगाया है, तो जल्द से जल्द सुनिश्चित करके टीकाकरण किया जाए।
- ✓ सर्दियों के मौसम में पशुओं के आहार पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। शरीर का तापमान सामान्य रखने हेतु पशुओं के आहार में दाना की मात्रा 500 ग्रा. से 1 कि.ग्रा. प्रतिदिन तक बढ़ाने की जरूरत होती है। पशुओं को चारा तथा दाना रात्रि के समय में देने से इन्हें ठंड कम लगती है।
- ✓ पहाड़ी क्षेत्रों में इस समय हरे चारे की उपलब्धता कम रहती है जिसके कारण पशुओं में खनिज लवणों तथा विटामिन-ए की कमी हो जाती है। इसलिए पशु आहार में 50- 100 ग्रा. खनिज मिश्रण अवश्य डालें।
- ✓ चारे की फसलें जैसे बरसीम, जई, स्नबमतदम की समय-समय पर सिंचाई करें तथा कटाई करें।

2) फरवरी

- ✓ इस माह के दौरान कई स्थानों पर वर्षा होती है, पशुओं को गीले मौसम से बचाने के लिए पर्याप्त उपाय किये जाने चाहिए, साथ ही बारिश के बाद आसमान साफ होने पर तापमान में गिरावट आती है, ठंड और खराब मौसम के खिलाफ पशुओं की सुरक्षा के लिए पिछले महीने के दौरान दिये गये सुझावों को इस महीने भी जारी रखें।
- ✓ पशुओं के लिए नियंत्रित प्रजनन कार्यक्रम फरवरी माह में जारी रखना चाहिए ताकि इस माह के दौरान सभी प्रतिभागी पशु गर्भवती हो जायें।
- ✓ पशुओं को अधिक मात्रा में बरसीम न खिलाएं। इससे अफारा हो सकता है। अफारा से बचाव हेतु सुबह के समय हमेशा पशुओं को सूखा चारा दें तथा इसके उपरांत ही बरसीम खिलाएं।
- ✓ डेयरी मवेशियों में थनैला रोग को रोकने के लिये उनके थन से पूरी तरह दूध निकालना चाहिए।
- ✓ थनैला रोग से बचाव हेतु उनके अयन को सूखा रखें तथा गीला न होने दें। हमेशा पूरे हाथ से मुट्ठी बांध कर दूध निकालें।
- ✓ पशुओं में मदकाल हेतु नियमित जांच करें तथा उच्च गुणवत्ता के विशिष्ट नस्ल के वीर्य से पशुओं को गर्भित करवाएं।

3) मार्च

- ✓ इस माह में पहाड़ी क्षेत्रों में हल्की ठंड तथा मैदानी क्षेत्रों में हल्की गर्मी की शुरुआत हो जाती है। इस माह में पशु मदकाल में आते है इसलिए मदकाल की नियमित जांच आवश्यक है।
- ✓ खुरपका मुंहपका रोग से बचाव हेतु टीकाकरण करवाएं।
- ✓ गर्भवती जानवरों में दुग्ध ज्वर को रोकने के लिए उनकी प्रतिरक्षा को बढ़ावा देने के लिये हर दिन 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण खिलाया जाना चाहिए।
- ✓ मैदानी क्षेत्रों में हल्की गर्मी होने के कारण मक्खी, मच्छर तथा अन्य वाह्यपरजीवी (Ticks, Flea) की अधिकता पाई जाती है। इनसे बचाव हेतु पशुशाला को साफ रखना अति आवश्यक है। मक्खी-मच्छरों से बचाव हेतु गोबर का भंडारण पशुशाला से दूरी पर करें।
- ✓ वाह्यपरजीवी (Ticks) से बचाव हेतू पशुओं के शरीर पर अमिट्राज (12.5%) घोल (2 मि.ली. प्रति ली. पानी) का छिड़काव करें, तथा पशुशाला में इसी को 5 मिली प्रति लीटर पानी में मिलाके छिड़काव करें।
- ✓ पशुओं के शरीर पर छिड़काव करते समय उनके मुंह को बांधकर रखें तथा पशुशाला में छिड़काव करते समय उन्हें पशुशाला के बाहर ही रखें, जब तक कि छिड़काव के अवशेष सूख न जाएं।

4) अप्रैल

- ✓ इस माह से तापमान में वृद्धि होने लगती है।
- ✓ पशुओं में भूख कम होना, उत्पादन में कमी, जल तथा लवण की कमी अधिक तापमान के प्रमुख प्रभाव होते हैं। अतः अत्याधिक तापमान से पशुओं का बचाव अति महत्वपूर्ण है।

- ✓ पशुओं की नियमित जल व्यवस्था पर समुचित ध्यान दिया जाए। पशुओं को दिन में कम से कम चार बार पानी पिलाने का प्रयास करें तथा पशुशाला में पंखों का प्रबंध करें।
- ✓ चरागाहों में जाने वाले पशुओं को सुबह जल्दी भेजा जाना चाहिए तथा दोपहर में छायादार स्थान पर विश्राम करवाना चाहिए।
- ✓ भार ढोने वाले जानवरों को दोपहर के समय तथा शाम के लगभग चार बजे तक छायादार और हवादार स्थान पर आराम करने देना चाहिए।
- ✓ इस समय चरागाहों में घास न्यूनतम स्तर पर होती है जिसके कारण पशुओं के शरीर में लवण विशेषकर फॉस्फोरस की कमी के कारण Pica नामक रोग के लक्षण नजर आते हैं। अतः पशुओं के आहार में (50 -100 ग्रा.) लवण मिश्रण अवश्य मिलाएं।
- ✓ सामुदायिक प्रयास के माध्यम से यह सुनिश्चित करें कि मृत पशुओं के शवों को पशुओं के नियमित चरने वाले मार्गों पर न फैंका जाये। ऐसे क्षेत्रों की घेराबंदी की जानी चाहिए ताकि मृत जानवरों के अवशेष जीवित जानवरों द्वारा निगले नहीं जा सकें, जिसके परिणामस्वरूप botulism हो सकता है जिसका इलाज नहीं किया जा सकता है और इसके परिणामस्वरूप जानवर की मृत्यु हो जाती है।

5) मई

- ✓ मई माह में अधिक तापमान की संभावना रहती है।
- ✓ मौसम के आधार पर पशु आहार की सामग्री को बदला जाना चाहिए। इस समय चारे में गेहूं की तुड़ी और ज्वार की मात्रा बढ़ा दें। दुधारू पशुओं को संतुलित आहार दें ताकि उनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता बढ़े।
- ✓ गर्मी जनित रोगों के फैलने से पशुओं में तापमान, जल व लवण की कमी, भूख कम होना एवम् कम उत्पादन जैसे लक्षण देखने को मिलते हैं।
- ✓ दिन में दो-तीन बार पशु के शरीर पर पानी का छिड़काव करें इसके अतिरिक्त पशुओं को धूप एवम् लू से बचाने के उपाय करें।
- ✓ पशुओं में भूख के कारण उत्पादन क्षमता में कमी दर्ज की जाती है, जिसके बचाव हेतू पशुओं को चारा एवम् दाना रात्रि समय में खिलाएं।
- ✓ आंतरिक परजीवियों से बचाने के लिए पशुओं को कृमिनाशक अवश्य खिलाएं।
- ✓ इस माह में भेड़ों के बाल काट देने चाहिए।
- ✓ पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने हेतू पशु आहार में By pass protein, By pass fat अवश्य खिलाएं तथा खनिज मिश्रण 50-100 ग्रा. प्रतिदिन की दर से खिलाएं।
- ✓ ग्रीष्मकाल में हरे चारे हेतू मक्का, बाजरा तथा ज्वार की बीजाई मई माह के द्वितीय पखवाड़े में कर लें।

6) जून

- ✓ इस माह में भी अत्याधिक तापमान की स्थिति बनी रहती है, जिसके कारण उत्पादन क्षमता में कमी आती है।
- ✓ पिछले माह में बताए गये गर्मी से बचाव के उपाय इस माह में भी जारी रखें।
- ✓ इस माह में पशुओं के गोबर की जांच करके पशुओं को कृमिनाशक की दवा अवश्य दें।
- ✓ पशुओं में गर्मी से संबंधित रोग जो इस समय के दौरान जानवरों को प्रभावित करने के लिये देखे जा सकते हैं, वे हैं बुखार, निर्जलीकरण (Dehydration), शरीर के लवण में कमी, भूख न लगना और उत्पादकता में कमी।
- ✓ पशुओं को गर्मी तथा तेज, गर्म और शुष्क गर्मी की दोपहर की हवाओं (लू) से बचाना चाहिए।
- ✓ इस माह में भेड़ों के बाल काट देने चाहिए।
- ✓ गलघोंटू (Haemorrhagic septicaemia) एवम् लंगड़ा बुखार (Black Quarter) बीमारी से बचाव हेतु टीकाकरण अवश्य करवाएं।
- ✓ गर्मियों के मौसम में पैदा की गई ज्वार में जहरीले पदार्थ (धुरीन) हो सकते हैं। अतः ज्वार (चरी) की कटाई, बीजाई के 55-60 दिन उपरांत ही करें।
- ✓ चरागाहों में घास की रोपाई हेतु तैयारी शुरू करें।

7) जुलाई

- ✓ जुलाई का महीना मानसून के मौसम की शुरुआत का गवाह है और कुछ क्षेत्रों में बारिश के साथ धूल भरी आंधी आती है। ऐसे समय में पशुओं को गर्मी और नम मौसम के कारण होने वाली बीमारी से बचाना चाहिए। पशुओं को कीचड़ और बाढ़ से बचाने के लिये पर्याप्त व्यवस्था करें। पशुओं को मानसून के कारण होने वाली बीमारियों से बचाएं और इस समय उन्हें कृमिनाशक (Deworming) देने पर विशेष ध्यान दें।

- ✓ जुलाई में अधिकांश हिस्सों में वर्षा ऋतु का आगमन होता है। ऐसे में गर्मी एवम् नमी जनित रोगों से बचाव आवश्यक है। तापमान तथा नमी में वृद्धि के कारण पशुओं में Heat stress के लक्षण पाए जाते हैं।
- ✓ यदि गलघोंटू, लंगड़ा बुखार का टीकाकरण न करवाया हो तो इस माह में करवा लें। भेड़ों को किसी भी बीमारी या संक्रमण से बचाने के लिए उनकी ऊन कतरने के तुरंत बाद कीटाणुनाशक घोल से भीगाना चाहिए।
- ✓ दुधारू पशुओं में प्रसव के पश्चात **''दुग्ध ज्वर''** होने की आशंका होती है। पशुओं को इस बीमारी से बचाने के लिये उन्हें गर्भावस्था के दौरान पर्याप्त मात्रा में धूप लेनी चाहिए। साथ ही गर्भावस्था के अंतिम महीने में, पशु को विटामिन-ई और सेलेनियम के इंजेक्शन दिये जाने चाहिए, जिससे उन्हें जन्म देने के समय होने वाली समस्याओं जैसे गर्भनाल (Placenta) का बाहर न गिरना आदि से बचाव हो सके। 5-10 ग्रा. या 70-100 मि. ली. कैल्शियम और फॉस्फोरस के मिश्रण को प्रतिदिन पशुओं को दिया जाना चाहिए।
- ✓ लंबी गर्मी के उपरांत वर्षा से हरे चारे की पैदावार में वृद्धि होती है और चारे में जहरीले पदार्थ पाये जाते हैं। अतः ऐसी फसल को समय पूर्व कच्ची अवस्था में न काटें न ही पशुओं को खिलाएं।

8) अगस्त

- ✓ वर्षा की अधिकता के कारण पशुओं में वर्षाजनित रोगों की अधिकता पाई जाती है।
- ✓ इस समय में पशुओं में थनैला रोग की अधिकता पाई जाती है। इस से बचाव हेतु पशुशाला के फर्श को साफ एवम् सूखा रखने का प्रयास करें। पशुशाला के फर्श को नियमित फिनायल के घोल से साफ करें।
- ✓ दुग्ध दोहन के उपरांत पशुओं के थनों को Povidone iodine घोल में डुबोएं ताकि दुग्ध नली में कीटाणु न जा सकें।
- ✓ गलघोंटू, खुरपका-मुंहपका एवम् लंगड़ा बुखार आदि के लक्षण दिखने पर नजदीकी पशु चिकित्सक से संपर्क करें।
- ✓ खुरपका मुंहपका रोग से पीड़ित पशुओं को एक अलग बाड़े में रखा जाना चाहिए ताकि वे स्वस्थ जानवरों को संक्रमित न करें।
- ✓ बछड़ों को खुरपका मुंहपका रोग से पीड़ित माताओं का दूध पीने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, क्योंकि इससे उनके दिल पर असर पड़ सकता है और मौत हो सकती है।
- ✓ रोगग्रस्त पशुओं के मुंह, खुरों और थनों को लाल दवाई के 1% घोल से साफ करना चाहिए।
- ✓ मक्खियों को दूर भगाने के लिये पशुशाला में नीलगिरी या लेमन ग्रास ऑयल का छिड़काव करें। पशुओं को प्रतिदिन 30-50 ग्रा. खनिज मिश्रण उनके चारे के साथ दें, इससे दूध की उत्पादकता बढ़ती है और पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है।

9) सितंबर

- ✓ पशुशाला की साफ सफाई का विशेष ध्यान दें। समय-समय पर फर्श, दीवारों तथा पानी की खुरली में चूने के घोल का छिड़काव करें।
- ✓ इस माह में प्रसूति रोग होने की आशंका रहती है इसलिए पशुओं को आराम से पचने वाला हरा चारा दें।
- ✓ दुधारू पशुओं में दुग्ध ज्वर (Milk fever) व्यांत के 7-8 दिन तक होने की संभावना रहती है। इस रोग से बचाव हेतु उसे गाभिन अवस्था में उचित मात्रा में सूर्य की रोशनी मिलनी चाहिए।
- ✓ इससे बचाव हेतु गर्भावस्था की तीसरी तिमाही में Anion Mixture को दें तथा विटामिन-ई तथा Selenium का टीका लगवाएं। दुग्ध ज्वर से बचाव के साथ यह अन्य कठनाइयों जैसे जेर न गिरना तथा थनैला इत्यादि में सहायता प्रदान करता है।
- ✓ सितंबर माह के अंतिम सप्ताह में बरसीम की बीजाई शुरू की जा सकती है।
- ✓ बचे हुए हरे चारे से साइलेज बनाएं।

10) अक्टूबर

इस माह से सर्दी का मौसम शुरू हो जाता है, इसलिए पशुओं को जाड़े की शुरुआत से बचाने के लिये उचित प्रबंध किये जाने चाहिए।

इस तथ्य के बावजूद कि हरा चारा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, यह सुनिश्चित करें कि इस समय पशुओं को दिया जाने वाला चारा अधिक मात्रा में सूखे चारे के साथ मिला हो। यह इस तथ्य के कारण है कि हरे चारे की खपत में वृद्धि से हरा दस्त और रक्त में अम्लता में वृद्धि (Acidosis) की समस्या हो सकती है।

मुंहपका-खुरपका रोग के टीके लगवा लें।

सर्दियों में चारे के भंडारण हेतु घासनियों से चारा कटाई का उपयुक्त समय अक्टूबर माह है।

पशुओं के चारे के लिए हाइब्रिड नेपियर, सेटेरिया तथा गिनी घास का कटाव करें।

बरसीम की उन्नत किस्में (बी एल - 10, मेस्कावी) की बिजाई इस माह में कर लें।

11) नवंबर

तापमान में कमी के कारण पशुओं को सर्दी से बचाव के उपाय करें।
जानवरों को तापमान में अचानक गिरावट से बचाने के लिये, जानवरों को रात के समय एक ढके हुए शेड में रखें।
बकरी और भेड़ को हर तीन साल में एक बार PPR से बचाव के लिए टीका लगाया जाना चाहिए।
भेड़ों के ऊन कतरने के 21 दिन बाद, उनके शरीर को वाह्यपरजीवी एवं संक्रमण से बचाने के लिये कीटाणुनाशकों से भीगना चाहिए।
पशुओं का बिछावन सूखा होना चाहिए तथा प्रतिदिन बदल दें।
पिछले महीने लगाई गई बरसीम की फसल में सिंचाई हर 15-20 दिन में करें।
जई फसल से अधिक चारा लेने किस्में जैसे सिरसा जई-6, सिरसा जई-9 की बिजाई इस माह में कर लें।

12) दिसंबर

सर्दी से बचाव का उचित प्रबंध करें।
इस समय में चारे के वृक्षों जैसे बिहुल, कचनार इत्यादि की कटाई करें।
पशुशाला में ठंडी हवा के प्रवेश को रोकने के लिए दरवाजों तथा खिड़कियों में जूट की बोरी के परदे लगवाएं।

निष्कर्ष

पशुधन पालन के लिए मासिक दृष्टिकोण किसानों को मौसमी चुनौतियों का कुशलतापूर्वक प्रबंधन करने और उत्पादकता को अनुकूलित करने में सक्षम बनाता है। बदलते मौसम, चारे की उपलब्धता और पशु स्वास्थ्य आवश्यकताओं के साथ प्रथाओं को संरेखित करके, किसान बेहतर विकास, प्रजनन और रोग की रोकथाम सुनिश्चित कर सकते हैं। यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण आर्थिक व्यवहार्यता और खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक टिकाऊ पशुधन प्रणालियों को बढ़ावा देता है। भविष्य के प्रयासों में जलवायु-लचीले अभ्यासों, साल भर पोषण रणनीतियों और बेहतर पशुधन निगरानी के लिए तकनीकी एकीकरण पर जोर दिया जाना चाहिए। अनुसंधान, विस्तार सेवाओं और किसान शिक्षा को मजबूत करने से नवाचार और स्थिरता को बढ़ावा मिलेगा, जिससे किसान पशुधन प्रबंधन में उभरती चुनौतियों का सामना करने में सक्षम होंगे।

****

ISSN: 3049-2211

सब्ज़ी उत्पादन में उभरती प्रौद्योगिकियाँ और नवाचार

अयुषा गुप्ता
पीएच.डी. शोधार्थी
सब्जी विज्ञान विभाग, महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़

परिचय

कृषि उत्पादन वर्तमान समय में कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है, जिनमें भूमि संसाधनों की सीमित उपलब्धता, जल संकट, उर्वरकों एवं कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न जोखिम प्रमुख हैं। इन परिस्थितियों ने न केवल फसल उत्पादकता को प्रभावित किया है बल्कि कृषि की दीर्घकालिक स्थिरता और पोषण सुरक्षा पर भी प्रश्न खड़ा कर दिया है। विशेषकर सब्जियाँ, जो पोषण में विटामिन, खनिज, रेशे और बायोएक्टिव यौगिकों का प्रमुख स्रोत हैं, उनकी निरंतर और गुणवत्तापूर्ण आपूर्ति समाज के स्वास्थ्य और पोषण स्तर के लिए अत्यंत आवश्यक है।

पारंपरिक खेती प्रणालियाँ अब बढ़ती जनसंख्या की मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं रह गई हैं। सब्ज़ी उत्पादन में उच्च उपज, पोषक गुणवत्ता और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए नई सोच और नवीन तकनीकों की आवश्यकता है। इस संदर्भ में जैव प्रौद्योगिकी, संरक्षित खेती, प्रिसिजन फार्मिंग, हाइड्रोपोनिक्स, एयरोपोनिक्स, नैनोप्रौद्योगिकी, सेंसर आधारित प्रबंधन और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी उभरती प्रौद्योगिकियाँ एक क्रांतिकारी विकल्प के रूप में सामने आ रही हैं। ये तकनीकें न केवल संसाधनों का कुशल प्रबंधन सुनिश्चित करती हैं, बल्कि उत्पादन लागत घटाने, रोग व कीट प्रबंधन को अधिक प्रभावी बनाने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने में भी सहायक हैं।

प्रमुख उभरती विधियां

1. संरक्षित खेती (Protected Cultivation)

संरक्षित खेती आधुनिक सब्ज़ी उत्पादन की एक उन्नत तकनीक है, जिसमें पॉलीहाउस, नेट-हाउस और ग्रीनहाउस जैसी संरचनाओं में पौधों को नियंत्रित वातावरण प्रदान किया जाता है। नियंत्रित तापमान, आर्द्रता और प्रकाश की मदद से पौधों की वृद्धि अनुकूल रहती है, जिससे उपज और गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है। शिमला मिर्च, खीरा, टमाटर और पत्तेदार सब्जियाँ संरक्षित खेती के अंतर्गत सफलतापूर्वक उगाई जाती हैं। इस पद्धति से जल और पोषक तत्वों का कुशल उपयोग होता है, साथ ही रोग और कीट प्रबंधन भी सरल हो जाता

ISSN: 3049-2211

है। हालाँकि, संरक्षित खेती में प्रारंभिक निवेश अपेक्षाकृत अधिक होता है, जिससे छोटे किसानों के लिए इसे अपनाना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। इस समस्या के समाधान के लिए लो-कॉस्ट पॉलीहाउस और नेट-हाउस मॉडल विकसित किए जा रहे हैं। लागत-लाभ विश्लेषण से स्पष्ट है कि भले ही शुरुआती खर्च अधिक हो, लेकिन ऑफ-सीजन उत्पादन और उच्च बाजार मूल्य के कारण दीर्घकाल में किसानों को बेहतर लाभ प्राप्त होता है।

2. हाइड्रोपोनिक्स एवं एरोपोनिक्स

हाइड्रोपोनिक्स और एरोपोनिक्स आधुनिक तकनीकें हैं, जिनमें मिट्टी के बजाय पोषक तत्वों के घोल के माध्यम से पौधों की वृद्धि कराई जाती है। हाइड्रोपोनिक्स में पौधे जड़ क्षेत्र में पोषण घोल पाकर विकसित होते हैं, जबकि एरोपोनिक्स में जड़ों पर पोषक तत्वों का फव्वारा या धुंध (mist) डाली जाती है। इन प्रणालियों का मुख्य लाभ पोषण घोल की सटीकता और उच्च जल उपयोग दक्षता है। कम पानी में अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है, जो जल संकट की स्थिति में अत्यंत उपयोगी है। पत्तेदार सब्ज़ियाँ, टमाटर और खीरा जैसी फसलें हाइड्रोपोनिक्स में बेहतर प्रदर्शन करती हैं, वहीं आलू और अन्य उच्च मूल्य वाली सब्ज़ियाँ एरोपोनिक्स में अधिक उत्पादन देती हैं। इन तकनीकों से रोग-मुक्त, उच्च गुणवत्ता वाली फसल प्राप्त होती है। साथ ही, चूँकि मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती, इसलिए यह तकनीक शहरी खेती और छतों पर सब्ज़ी

उत्पादन के लिए उपयुक्त है। प्रारंभिक लागत और तकनीकी ज्ञान इसकी सीमाएँ हैं, लेकिन दीर्घकालिक दृष्टि से उच्च उपज और सुरक्षित उत्पादन इसे लाभकारी बनाते हैं।

3. वर्टिकल फार्मिंग (Vertical Farming)

टिकल फार्मिंग एक उन्नत तकनीक है जिसमें सीमित स्थान में बहु-स्तरीय संरचनाओं का उपयोग कर फसल उत्पादन किया जाता है। इस पद्धति में पौधों को कृत्रिम रूप से नियंत्रित पर्यावरण जैसे तापमान, आर्द्रता, कार्बन डाइऑक्साइड स्तर और पोषक तत्व घोल प्रदान किए जाते हैं। एलईडी आधारित प्रकाश तकनीक सूर्य के प्रकाश का विकल्प देती है और पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता को अधिकतम करती है। शहरी क्षेत्रों में तेजी से बढ़ती आबादी और सीमित भूमि संसाधनों को देखते हुए वर्टिकल फार्मिंग सब्ज़ियों की सतत आपूर्ति का व्यवहारिक विकल्प है। पत्तेदार सब्ज़ियाँ, टमाटर, खीरा और स्ट्रॉबेरी जैसी उच्च मूल्य वाली फसलें इस प्रणाली में अधिक सफल पाई गई हैं। इसकी मदद से

शहरों के निकट ही उत्पादन संभव हो जाता है, जिससे परिवहन लागत और कटाई के बाद होने वाले नुकसान कम हो जाते हैं।

4. प्रिसिजन एग्रीकल्चर (Precision Agriculture)

प्रिसिजन एग्रीकल्चर आधुनिक कृषि की एक उन्नत तकनीक है जिसमें सेंसर, ड्रोन, जीआईएस (GIS), आईओटी (IoT) और रिमोट सेंसिंग जैसी साधनों का उपयोग किया जाता है। इसका उद्देश्य फसलों की वास्तविक समय में निगरानी कर उत्पादन को अधिक दक्ष और टिकाऊ बनाना है। इस तकनीक से मिट्टी की नमी, पोषक तत्वों की उपलब्धता, पत्तियों की सेहत और रोग की प्रारंभिक अवस्था का सटीक आकलन किया जा सकता है। ड्रोन और उपग्रह चित्रण से खेत के विभिन्न हिस्सों की स्थिति का त्वरित आकलन होता है, जबकि सेंसर आधारित उपकरण मिट्टी और पौधों की आवश्यकताओं का डेटा एकत्र करते हैं। इन जानकारियों के आधार पर उर्वरक, पानी और कीटनाशकों की आपूर्ति उतनी ही की जाती है जितनी आवश्यकता हो।

ISSN: 3049-2211

5. ऊतक संवर्धन (Tissue Culture) और सब्ज़ी उत्पादन

ऊतक संवर्धन आधुनिक सब्ज़ी उत्पादन में एक महत्वपूर्ण जैव-प्रौद्योगिकीय तकनीक है, जिसके माध्यम से पौधों की सूक्ष्म ऊतकों से तेज़ और बड़े पैमाने पर पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस विधि से प्राप्त पौधे रोग-मुक्त, आनुवंशिक रूप से शुद्ध और उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं। सूक्ष्म प्रवर्धन (Micropropagation) का उपयोग टमाटर, आलू, बैंगन और मिर्च जैसी सब्ज़ियों में स्वस्थ पौधों के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए किया जाता है। हैप्लॉइड और डबल हैप्लॉइड उत्पादन वांछित गुणों वाले नए संकर विकसित करने में सहायक है, जबकि क्रायोप्रिज़र्वेशन दुर्लभ और मूल्यवान किस्मों के दीर्घकालिक संरक्षण का साधन प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, सोमाक्लोनल विविधता के माध्यम से नए लक्षणों वाली सब्ज़ी किस्मों का विकास संभव है। इस प्रकार, ऊतक संवर्धन तकनीक सब्ज़ी उत्पादन में गुणवत्ता सुधार, रोग प्रबंधन, संकर विकास और संरक्षण में अहम योगदान देती है तथा भविष्य में जलवायु-सहनशील और पोषणयुक्त सब्ज़ियों के विकास का आधार बन सकती है।

6. जैव प्रौद्योगिकी एवं जीनोमिक्स

सब्ज़ी उत्पादन में जैव प्रौद्योगिकी और जीनोमिक्स का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। इन तकनीकों का उपयोग रोग प्रतिरोधी, उच्च उत्पादक और बेहतर गुणवत्ता वाली किस्मों के विकास में किया जा रहा है। पारंपरिक चयन विधियों की तुलना में यह प्रक्रिया अधिक तेज़ और सटीक होती है। हाल के वर्षों में **CRISPR/Cas9 जैसी जीन-संपादन तकनीकें** कृषि अनुसंधान में क्रांतिकारी बदलाव ला रही हैं। इनके माध्यम से पौधों के जीनोम में आवश्यक बदलाव कर रोग और कीटों के प्रति प्रतिरोधी किस्में विकसित की जा रही हैं। इसी तरह, पोषण सुधारित (biofortified) सब्ज़ियाँ जैसे विटामिन A से भरपूर गाजर, आयरन-समृद्ध पालक और एंटीऑक्सीडेंट से युक्त टमाटर विकसित किए जा चुके हैं, जो कुपोषण की समस्या को दूर करने में सहायक हैं। इसके अलावा, जीनोमिक्स आधारित तकनीकें पौधों की **जलवायु परिवर्तन सहनशीलता** बढ़ाने में भी मदद करती हैं। तापमान, सूखा और लवणता जैसे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उच्च उत्पादकता देने वाली किस्मों के विकास की संभावना बढ़ गई है।

7. नैनो-प्रौद्योगिकी का उपयोग

नैनो-प्रौद्योगिकी आधुनिक सब्ज़ी उत्पादन में एक उभरता हुआ क्षेत्र है, जो पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक दक्ष और पर्यावरण-अनुकूल समाधान प्रदान करता है। इसका सबसे प्रमुख उपयोग नैनो-उर्वरक और नैनो-कीटनाशकों के रूप में हो रहा है। ये न केवल पौधों को पोषक तत्वों की धीमी और नियंत्रित आपूर्ति सुनिश्चित करते हैं, बल्कि आवश्यक मात्रा में ही सक्रिय रहते हैं, जिससे मिट्टी और जल प्रदूषण का खतरा कम हो जाता है। सब्ज़ियों में रोग और कीट प्रबंधन के लिए नैनो-कण (nanoparticles) एक प्रभावी विकल्प के रूप में सामने आए हैं। इनके उपयोग से रोग नियंत्रण अधिक लक्षित और दीर्घकालिक हो सकता है। इसी तरह, बीज उपचार में नैनोपार्टिकल्स का प्रयोग अंकुरण दर, प्रारंभिक वृद्धि और पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक पाया गया है।

8. सतत एवं जलवायु-स्मार्ट खेती

सतत एवं जलवायु-स्मार्ट खेती आज के समय की आवश्यकता है, क्योंकि सब्ज़ी उत्पादन जलवायु परिवर्तन और सीमित संसाधनों की चुनौती का सामना कर रहा है। **संरक्षण कृषि**, जैसे फसल चक्र, न्यूनतम जुताई और **मल्चिंग**, मिट्टी की नमी और उर्वरता को बनाए रखने में सहायक हैं। इसके साथ ही **ड्रिप इरिगेशन** जैसी सूक्ष्म सिंचाई तकनीकें कम पानी में अधिक उत्पादन सुनिश्चित करती हैं। जलवायु-स्मार्ट खेती में उन तकनीकों और प्रथाओं को शामिल किया जाता है, जो संसाधनों का कुशल उपयोग करते हुए उत्पादकता बढ़ाती हैं और साथ ही कार्बन फुटप्रिंट घटाने में मदद करती हैं। जैसे, जैविक उर्वरकों और नवीकरणीय ऊर्जा का प्रयोग पर्यावरणीय दबाव को कम करता है। सब्ज़ी उत्पादन में इन उपायों का अपनाना न केवल किसानों की आय और खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करेगा, बल्कि बदलते मौसम की परिस्थितियों में उत्पादन को स्थिर और टिकाऊ बनाने में भी अहम भूमिका निभाएगा।

निष्कर्ष

सब्ज़ी विज्ञान में उभरती हुई विधियाँ जैसे हाइड्रोपोनिक्स, वर्टिकल फार्मिंग, जीन संपादन, प्रिसिजन एग्रीकल्चर और नैनो-प्रौद्योगिकी उत्पादकता, गुणवत्ता और स्थिरता को एक नया आयाम प्रदान कर रही हैं। ये तकनीकें न केवल सीमित संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करती हैं, बल्कि बदलते जलवायु परिदृश्य में किसानों को सुरक्षित और टिकाऊ उत्पादन का विकल्प भी देती हैं। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में इन उन्नत तकनीकों का व्यापक प्रसार तभी संभव होगा जब इनके लिए किफायती मॉडल, किसानों को प्रशिक्षण तथा सरकारी नीति और संस्थागत समर्थन उपलब्ध कराया जाए। भविष्य में इन तकनीकों का एकीकृत प्रयोग ही सब्ज़ी उत्पादन को अधिक प्रतिस्पर्धी, पर्यावरण-अनुकूल और दीर्घकालिक रूप से लाभकारी बना सकेगा।

****

कृषि और भौगोलिक संकेतक (GI Tag): किसानों की पहचान और समृद्धि का नया रास्ता

लेफ्ट डॉ सिम्पल जैन
सहायक प्राध्यापक
आस्पी पोषण और सामुदायिक विज्ञानं महाविद्यालय, सरदारकृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि यूनिवर्सिटी, सरदारकृषिनगर, गुजरात

भूमिका

आज के वैश्वीकरण के युग में जहाँ बड़े-बड़े उद्योग और कंपनियाँ बाज़ार पर हावी हैं, वहीं स्थानीय और परंपरागत कृषि उत्पादों की पहचान धीरे-धीरे धुंधली होती जा रही है। वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा इतनी तीव्र हो चुकी है कि छोटे किसान और स्थानीय उत्पादक अपने अनूठे उत्पादों को पहचान दिलाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। ऐसे समय में भौगोलिक संकेतक (GI टैग) किसानों और स्थानीय उत्पादकों के लिए न केवल सुरक्षा कवच है बल्कि सम्मान और समृद्धि का माध्यम भी है। भौगोलिक संकेतक से तात्पर्य केवल किसी उत्पाद की पहचान से नहीं है, बल्कि यह उस भूमि, जलवायु, मिट्टी और वहाँ की पारंपरिक तकनीक से जुड़ा होता है। किसी क्षेत्र की विशिष्टता ही उस उत्पाद को अलग पहचान दिलाती है। जैसे किसी व्यक्ति का नाम और पहचान होती है, वैसे ही किसी उत्पाद की पहचान भी उसकी उत्पत्ति से होती है। GI टैग उस पहचान को कानूनी संरक्षण देकर उसे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करता है।

भौगोलिक संकेतक (GI) क्या है?

भौगोलिक संकेतक यानी Geographical Indication एक प्रकार का बौद्धिक संपदा अधिकार (Intellectual Property Right) है। इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी उत्पाद की गुणवत्ता, स्वाद, विशेषता या ख्याति उस क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों से जुड़ी हुई है। यह अधिकार यह गारंटी देता है कि केवल उसी क्षेत्र के उत्पादक ही उस नाम से उत्पाद को बेच सकते हैं। उदाहरण के लिए, दार्जिलिंग चाय की सुगंध और स्वाद केवल दार्जिलिंग की जलवायु और ऊँचाई के कारण है। इसी प्रकार कश्मीरी केसर, अल्फांसो आम, नागपुर संतरा, और बनारसी पान जैसी वस्तुएँ अपने-अपने क्षेत्र की पहचान से जुड़ी हैं। GI टैग प्राप्त करने के बाद इन नामों का दुरुपयोग नहीं किया जा सकता। भारत में GI टैग की व्यवस्था 'भौगोलिक संकेतक (पंजीकरण और संरक्षण) अधिनियम, 1999' के अंतर्गत लागू की गई। 2003 से

चेन्नई में GI रजिस्ट्री स्थापित की गई है। यहाँ पर किसी भी उत्पाद का GI पंजीकरण करवाने के लिए आवेदन किया जा सकता है।

GI टैग प्राप्त करने की प्रक्रिया

GI टैग प्राप्त करना एक विस्तृत और कानूनी प्रक्रिया है। किसी भी उत्पाद को GI टैग दिलाने के लिए उत्पाद से जुड़ी संस्था, सहकारी समिति या कोई प्राधिकृत संगठन आवेदन करता है। आवेदन में निम्नलिखित विवरण आवश्यक होता है:

1. उत्पाद की उत्पत्ति का इतिहास।
2. उसकी विशिष्ट गुणवत्ता और प्रतिष्ठा का प्रमाण।
3. उत्पादक क्षेत्र का मानचित्र और भौगोलिक स्थिति।
4. उत्पादकों की सूची और उनके प्रमाण।
5. प्रयोग में आने वाली पारंपरिक विधियाँ।

आवेदन की प्रारंभिक जाँच के बाद इसे सार्वजनिक आपत्ति हेतु प्रकाशित किया जाता है। यदि कोई आपत्ति नहीं आती या आपत्तियाँ निरस्त हो जाती हैं, तो GI टैग प्रदान कर दिया जाता है। यह मान्यता 10 वर्षों के लिए होती है, जिसके बाद इसका नवीनीकरण अनिवार्य होता है। यह प्रक्रिया किसानों को न केवल कानूनी सुरक्षा देती है बल्कि उनके उत्पादों की प्रतिष्ठा और विपणन क्षमता भी बढ़ाती है। GI टैग प्राप्त होने के बाद किसान अपने उत्पाद को नकली और घटिया विकल्पों से अलग साबित कर सकते हैं।

किसानों के जीवन पर GI टैग का प्रभाव

GI टैग मिलने से किसानों के जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन आते हैं।

1. बेहतर दाम– GI टैग वाले उत्पाद सामान्य उत्पादों की तुलना में अधिक दाम पर बिकते हैं। इसका कारण यह है कि उपभोक्ता इन उत्पादों की गुणवत्ता और विशिष्टता को समझते हैं और उसके लिए अधिक मूल्य चुकाने को तैयार रहते हैं।

2. नकली उत्पादों से सुरक्षा– GI टैग मिलने से असली और नकली उत्पादों में भेद स्पष्ट हो जाता है। उदाहरण के लिए, असली बासमती चावल और नकली चावल के बीच अंतर स्थापित किया जा सकता है।

3. वैश्विक बाज़ार तक पहुँच– GI टैग अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में विश्वास बढ़ाता है। विदेशी खरीदारों को यह भरोसा होता है कि उत्पाद की गुणवत्ता और विशेषता असली है। इससे निर्यात में वृद्धि होती है।

4. सामूहिक ताक़त– GI टैग किसी व्यक्तिगत किसान की संपत्ति नहीं है, बल्कि पूरे क्षेत्र के किसानों की साझा संपत्ति होती है। इससे सामूहिकता और सहकारी समितियों की शक्ति बढ़ती है।

5. ग्रामीण विकास - GI टैग ग्रामीण समाज और अर्थव्यवस्था को भी कई प्रकार से प्रभावित करता हैं जैसे:

- ✓ **रोज़गार में वृद्धि** – GI टैग मिलने के बाद उत्पादों की माँग बढ़ती है, जिससे पैकिंग, प्रसंस्करण, विपणन और परिवहन में नए रोज़गार के अवसर बनते हैं।
- ✓ **महिलाओं की भागीदारी** – GI उत्पादों की माँग बढ़ने से महिलाओं के लिए नए कार्य अवसर उत्पन्न होते हैं क्योंकि पैकिंग और प्रसंस्करण में महिलाएँ प्रमुख भूमिका निभाती हैं। ।
- ✓ **ग्रामीण पर्यटन** – कई बार उपभोक्ता विशेष उत्पाद को देखने और खरीदने के लिए उस क्षेत्र में आते हैं इससे ग्रामीण पर्यटन और स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलता है जैसे केरल के मसाले या कश्मीर का केसर।

भारत में कृषि से जुड़े प्रमुख GI उत्पाद

भारत में अब तक 400 से अधिक उत्पादों को GI टैग प्राप्त हो चुका है, जिनमें लगभग 200 कृषि और खाद्य उत्पाद शामिल हैं। यह संख्या लगातार बढ़ रही है। कुछ प्रमुख GI उत्पाद इस प्रकार हैं:

- ✓ कश्मीरी केसर– विश्व का सबसे महंगा मसाला।
- ✓ दार्जिलिंग चाय– भारत का पहला GI टैग प्राप्त कृषि उत्पाद (2004)।
- ✓ अल्फांसो आम (हापुस, महाराष्ट्र)– अंतरराष्ट्रीय बाजार में भारी मांग।
- ✓ बनारसी पान (उत्तर प्रदेश)– धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व।
- ✓ बासमती चावल– पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड और पश्चिमी उत्तर प्रदेश की पहचान।
- ✓ शाही लीची (बिहार)– मीठास और सुगंध के लिए प्रसिद्ध।
- ✓ काले नमक चावल (उत्तर प्रदेश)– पारंपरिक सुगंधित चावल।
- ✓ कांगड़ा चाय (हिमाचल प्रदेश) – विशिष्ट स्वाद और औषधीय गुण।
- ✓ नागा मिर्च (नागालैंड) – विश्व की सबसे तीखी मिर्चों में से एक।
- ✓ मणिपुर का काले चावल (चाक-हाओ) – त्योहारों और धार्मिक अवसरों पर प्रयोग।
- ✓ त्रिपुरा की क्वीन अनानास – स्थानीय खानपान और उद्योग से जुड़ा।
- ✓ असम ऑर्थोडॉक्स चाय – अद्वितीय स्वाद।
- ✓ गिर केसर आम (गुजरात) – मीठास और रंग के लिए प्रसिद्ध।
- ✓ नागपुर संतरा (महाराष्ट्र) – खट्टे-मीठे स्वाद के कारण विख्यात।
- ✓ मालाबार काली मिर्च (केरल) – मसाला व्यापार का वैश्विक प्रतीक।

- ✓ नवर चावल (केरल) – औषधीय गुणों से भरपूर।
- ✓ कूर्ग ऑरेंज (कर्नाटक) – पहाड़ी संतरे की खास किस्म।
- ✓ बैंगलोर ब्लू अंगूर – व्यापारिक उपयोगिता ।
- ✓ मिथिला मखाना (बिहार) – स्वास्थ्यवर्धक और धार्मिक महत्व।
- ✓ ओडिशा का कंधमाल हल्दी – औषधीय महत्व।
- ✓ पश्चिम बंगाल का गोबिंदभोग चावल – सुगंधित और छोटे दानों वाला।
- ✓ करेन मूसली चावल (अंडमान एवं निकोबार) – जनजातीय पहचान और पोषण संपन्न।
- ✓ कच्छी खारेक डेट्स: कच्छ , गुजरात (सरदारकृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि यूनिवर्सिटी, सरदारकृषिनगर के खजूर अनुसंधान केंद्र मुंद्रा की Gi tag प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।)

ये सभी उत्पाद न केवल स्थानीय किसानों के लिए गर्व का विषय हैं, बल्कि भारत की पहचान को भी वैश्विक स्तर पर मजबूत करते हैं।

चुनौतियाँ

हालाँकि GI टैग किसानों के लिए लाभकारी है, लेकिन इसके सामने कई चुनौतियाँ भी हैं जिन्हे दूर करने की आवश्यकता हैं:

1. किसानों में जानकारी और जागरूकता की कमी।
2. पंजीकरण और प्रमाणन की उच्च लागत।
3. नकली उत्पादों पर रोक लगाने की कमजोर व्यवस्था।
4. अंतरराष्ट्रीय विवाद।
5. मार्केटिंग और ब्रांडिंग की कमी।
6. जलवायु परिवर्तन से उत्पाद की गुणवत्ता पर असर।

भविष्य की दिशा

1. किसानों में जागरूकता और प्रशिक्षण बढ़ाना।
2. GI उत्पादों की ऑनलाइन मार्केटिंग और ई-कॉमर्स से जोड़ना।
3. सरकार द्वारा प्रमाणन, ब्रांडिंग और पैकेजिंग में सहायता।
4. GI को कृषि पर्यटन और ग्रामीण पर्यटन से जोड़ना।
5. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर GI की मान्यता और सुरक्षा को मजबूत करना।

निष्कर्ष

भौगोलिक संकेतक टैग केवल कानूनी पहचान नहीं है, बल्कि यह किसानों की मेहनत, परंपरा और भूमि की खुशबू का प्रतीक है। यह किसानों को उचित दाम दिलाने के साथ-साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था और संस्कृति को भी सशक्त करता है। जब हम दार्जिलिंग की चाय का स्वाद लेते हैं, बासमती चावल की खुशबू महसूस करते हैं या अल्फांसो आम का रस चखते हैं, तो उसमें उस मिट्टी और किसानों की मेहनत झलकती है। यही असली मायने हैं GI टैग के। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में, जहाँ हर राज्य और हर क्षेत्र की अपनी विशिष्ट कृषि परंपराएँ हैं, वहाँ GI टैग ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय गौरव का आधार बन सकता है। भविष्य में यदि GI उत्पादों को सही दिशा, संरक्षण और बाज़ार मिले, तो यह न केवल किसानों की समृद्धि का मार्ग खोलेगा बल्कि भारत की पहचान को भी दुनिया भर में और मज़बूत करेगा।

****

ISSN: 3049-2211

जलवायु परिवर्तन का फल उत्पादन पर प्रभाव

आशीष कुमार- फल विज्ञान विभाग, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, एमपीयूएटी, उदयपुर, राजस्थान
राहुल दुधवाल- एचएनबीजीयू, श्रीनगर, उत्तराखंड

परिचय

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक गंभीर वैश्विक समस्या बन चुका है। यह केवल पर्यावरण को प्रभावित नहीं करता, बल्कि कृषि और फल उत्पादन जैसे संवेदनशील क्षेत्रों पर भी गहरा प्रभाव डालता है। जलवायु परिवर्तन का अर्थ है पृथ्वी के औसत तापमान, वर्षा के पैटर्न, आर्द्रता, वायुमंडलीय कारकों और मौसम की चरम घटनाओं में दीर्घकालिक परिवर्तन। यह परिवर्तन प्राकृतिक प्रक्रियाओं और मानव गतिविधियों के संयोजन के कारण उत्पन्न होता है।

फल उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव सीधे और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में दिखाई देता है। फल उत्पादन केवल पौधों के विकास पर निर्भर नहीं करता, बल्कि यह मौसम, मिट्टी की स्थिति, जल उपलब्धता और कीटों एवं रोगों की उपस्थिति जैसे कई कारकों पर निर्भर करता है। इसलिए, जलवायु परिवर्तन के कारण फल उत्पादन में गुणवत्ता, मात्रा और आर्थिक मूल्य में उतार-चढ़ाव देखने को मिलता है।

जलवायु परिवर्तन के मुख्य कारक

जलवायु परिवर्तन के मुख्य कारक प्राकृतिक और मानवजनित दोनों हो सकते हैं।

1. **मानवजनित कारण**
   - **ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन:** उद्योग, परिवहन, जीवाश्म ईंधन का दहन, और कृषि गतिविधियों से कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है।
   - **वनों की कटाई:** वनस्पतियों की कटाई से वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर बढ़ता है और तापमान में वृद्धि होती है।
   - **प्रदूषण और शहरीकरण:** औद्योगिक प्रदूषण और शहरी विस्तार से स्थानीय और वैश्विक जलवायु में बदलाव आता है।
2. **प्राकृतिक कारण**
   - सूर्य की गतिविधियों में परिवर्तन
   - ज्वालामुखी गतिविधियाँ और भूकंप
   - समुद्री धाराओं और वायुमंडलीय चक्रों का बदलाव

इन सभी कारकों के कारण तापमान, वर्षा पैटर्न, हवा की गति और मौसमी बदलाव प्रभावित होते हैं, जो फल उत्पादन पर प्रत्यक्ष रूप से असर डालते हैं।

फल उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

जलवायु परिवर्तन फल उत्पादन को कई तरीकों से प्रभावित करता है। इसे हम निम्नलिखित प्रमुख बिंदुओं में समझ सकते हैं:

1. तापमान में वृद्धि का प्रभाव

तापमान में वृद्धि का प्रभाव फल पौधों की वृद्धि, फूलने और फल बनने की प्रक्रिया पर पड़ता है। अधिकांश फल पौधे विशेष तापमान पर फूलते और फल देते हैं। उदाहरण के लिए:

- **सेब और चेरी** जैसी ठंडा-सहनशील फलों के लिए कम तापमान आवश्यक होता है। अगर तापमान बहुत बढ़ जाता है, तो फूलों की संख्या कम हो सकती है और फल का आकार छोटा रह सकता है।
- **आम और पपीता** जैसी उष्णकटिबंधीय फलों में उच्च तापमान से विकास तेज़ हो सकता है, लेकिन अत्यधिक गर्मी फल की गुणवत्ता और स्वाद को प्रभावित कर सकती है।

तापमान में अत्यधिक वृद्धि के कारण फल जल्दी पक सकते हैं, जिससे बाज़ार में उनकी टिकाऊपन और विपणन क्षमता कम हो जाती है।

2. वर्षा पैटर्न और जल उपलब्धता

फल पौधों के लिए पानी का पर्याप्त और समय पर उपलब्ध होना आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा पैटर्न अनियमित हो रहे हैं:

- **सूखा:** सूखे की अवधि बढ़ने से मिट्टी की नमी कम होती है, फल पौधों की वृद्धि रुक जाती है और फूल तथा फल झड़ सकते हैं।
- **अत्यधिक वर्षा:** लंबे समय तक लगातार बारिश से मिट्टी में जलभराव होता है, जिससे जड़ें सड़ सकती हैं और फल का विकास प्रभावित होता है।

विशेष रूप से, अनार, अंगूर, आम और आमला जैसे फलों में पानी की कमी या असमानता सीधे तौर पर फल झड़ने, फूलों की कमी और उत्पादन में गिरावट का कारण बनती है।

3. मौसम की चरम घटनाओं का प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के कारण अधिक तूफान, ओलावृष्टि, बाढ़, हीट वेव और ठंडा वेव जैसी चरम घटनाएं बढ़ गई हैं। ये घटनाएं फल उत्पादन पर गंभीर प्रभाव डालती हैं:

- **तूफान और ओलावृष्टि**: पौधों की शाखाओं और फलों को नुकसान पहुँचाती हैं।
- **हीट वेव**: फूलों का झड़ना और पत्तियों का सिकुड़ना आम होता है।
- **अत्यधिक ठंड**: उष्णकटिबंधीय फलों की पैदावार प्रभावित होती है।

इन घटनाओं के कारण किसानों को प्रत्यक्ष आर्थिक नुकसान होता है और फलों की उपलब्धता बाजार में अस्थिर हो जाती है।

4. कीट और रोगों का प्रकोप

जलवायु परिवर्तन के कारण फल पौधों पर कीट और रोगों का प्रकोप बढ़ता है।

- उच्च तापमान और आर्द्रता कई कीटों के जीवन चक्र को तेज़ कर देती है।
- अनियमित वर्षा और बदलते मौसम के कारण फफूंद और बैक्टीरिया आधारित रोग अधिक फैलते हैं।
- उदाहरण: आम में आम मूसली कीट और पत्ती का रोग, अंगूर में पाउडरी मिल्ड्यू।

इससे फल की गुणवत्ता घटती है और उत्पादन में कमी आती है।

5. फूलने और फल बनने के चरण पर प्रभाव

फल पौधों के जीवन चक्र में फूलना और फल बनना सबसे संवेदनशील चरण है।

- तापमान और जलवायु में बदलाव के कारण फूलों का समय बदल सकता है।
- कुछ पौधे जल्दी फूल सकते हैं जबकि कुछ देर से।
- इससे परागण और फल विकसित होने की प्रक्रिया प्रभावित होती है।

विशेष रूप से, सेब, चेरी और नाशपाती जैसे फलों में फूलों और परागकण की असमानता के कारण फल उत्पादन घटता है।

6. फल की गुणवत्ता और पोषण पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन केवल उत्पादन मात्रा पर नहीं, बल्कि फल की गुणवत्ता और पोषण पर भी असर डालता है।

- उच्च तापमान और जल तनाव से फलों में शर्करा, विटामिन और एंटीऑक्सिडेंट्स की मात्रा कम हो सकती है।
- अत्यधिक बारिश से फल का स्वाद फीका हो सकता है और उनका रंग प्रभावित होता है।
- फल का भंडारण जीवन कम होता है और पका हुआ फल जल्दी खराब हो जाता है।

उदाहरण के लिए, अंगूर और आम में अत्यधिक गर्मी से उनका रंग और स्वाद प्रभावित होता है।

7. भू-क्षेत्रीय बदलाव और खेती का अनुकूलन

जलवायु परिवर्तन के कारण कुछ क्षेत्रों में परंपरागत फसलें नहीं उगाई जा सकती।

- ठंडा-सहनशील फलों के लिए उच्च तापमान वाले क्षेत्रों को अनुकूल नहीं माना जाता।
- किसानों को नए क्षेत्रों में फल पौधों की खेती करनी पड़ सकती है।
- इससे स्थानीय कृषि परंपराओं और आर्थिक स्थिरता पर प्रभाव पड़ता है।

जलवायु परिवर्तन के फल उत्पादन पर संभावित समाधान

फल उत्पादन को जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होने से रोकने के लिए कुछ वैज्ञानिक और प्रायोगिक उपाय किए जा सकते हैं।

1. जलवायु-सहिष्णु फसल प्रजातियों का विकास

- नए फल पौधों की प्रजातियों का विकास जो उच्च तापमान, सूखा और रोगों के प्रति सहिष्णु हों।
- उदाहरण: गर्मी-सहनशील आम, कीट-प्रतिरोधी अंगूर।

2. स्मार्ट एग्रीकल्चर तकनीक

- ड्रिप इरिगेशन और स्प्रिंकलर जैसी तकनीकों से पानी का कुशल उपयोग।
- मल्चिंग से मिट्टी की नमी बनाए रखना और तापमान नियंत्रित करना।
- मौसम पूर्वानुमान और डेटा-आधारित कृषि निर्णय।

3. जैविक और रासायनिक प्रबंधन

- रोग और कीट नियंत्रण के लिए जैविक कीटनाशकों का उपयोग।
- संतुलित उर्वरक और पोषण प्रबंधन से पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाना।

4. संरक्षण और भूमि प्रबंधन

- वृक्षारोपण और वन संरक्षण से स्थानीय जलवायु को स्थिर रखना।
- मिट्टी संरक्षण तकनीक से पानी की धारण क्षमता बढ़ाना।
- कटाव और बाढ़ रोकने के उपाय।

5. प्रशिक्षण और जागरूकता

- किसानों को जलवायु परिवर्तन के प्रभाव और उपायों की जानकारी देना।
- नए कृषि तकनीकों और उपकरणों का उपयोग सिखाना।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन फल उत्पादन के लिए एक गंभीर चुनौती है। यह उत्पादन मात्रा, गुणवत्ता, पौधों की जीवन प्रक्रिया, कीट और रोग नियंत्रण, और आर्थिक स्थिरता को प्रभावित करता है। तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा, मौसम की चरम घटनाएं और कीटों का बढ़ता प्रकोप फल उद्योग को अस्थिर बना रहे हैं।

हालांकि, वैज्ञानिक अनुसंधान और आधुनिक कृषि तकनीकों के माध्यम से इस प्रभाव को कम किया जा सकता है। जलवायु-सहिष्णु फसलों का विकास, स्मार्ट इरिगेशन, जैविक प्रबंधन, और किसान प्रशिक्षण जैसे उपाय महत्वपूर्ण हैं। इसके अलावा, नीति निर्माता और कृषि वैज्ञानिकों को मिलकर नीतिगत और व्यावहारिक समाधान विकसित करने की आवश्यकता है।

यदि किसानों, वैज्ञानिकों और सरकारों के बीच सामूहिक प्रयास हों, तो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को नियंत्रित करके फल उत्पादन को स्थायी और लाभकारी बनाया जा सकता है।

****

जैविक खेती: सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, विपणन और नीति

आलोक कुमार- परास्नातक छात्र, मृदा विज्ञान एवम् कृषि रसायन
विरेन्द्र सिंह यादव- शोधछात्र, सस्य विज्ञान
प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन विद्यालय, स्नातकोत्तर कृषि विज्ञान महाविद्यालय, केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय (इम्फाल), उमियाम, मेघालय

भूमिका

जैविक खेती, कृषि में एक बड़े बदलाव की तरह है, जो सिर्फ कुछ तकनीकों से आगे बढ़कर एक संपूर्ण सामाजिक-आर्थिक प्रणाली का रूप लेती है। इस दृष्टिकोण के गहरे और कई तरह के प्रभाव हैं, खासकर भारत जैसे देश के लिए, जहाँ एक बड़ी खेती करने वाली आबादी अपनी भूमि और अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य से सीधे तौर पर जुड़ी हुई है। जैविक खेती के सिद्धांत, जो पारिस्थितिक संतुलन को प्राथमिकता देते हैं और रासायनिक खादों-दवाइयों से बचते हैं, टिकाऊ और सुरक्षित भोजन की बढ़ती वैश्विक मांग के साथ गहराई से मेल खाते हैं। यह बदलाव सिर्फ एक पर्यावरणीय विकल्प नहीं है, बल्कि एक रणनीतिक कदम है, जो ग्रामीण रोजगार और किसानों की आय से लेकर राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तक सब कुछ प्रभावित करता है।

1. सामाजिक-आर्थिक प्रभाव

जैविक खेती सिर्फ एक कृषि तकनीक नहीं है, बल्कि एक सामाजिक-आर्थिक प्रणाली है जिसके गहरे और विविध प्रभाव हैं, खासकर भारत जैसे देश के लिए जहाँ एक बड़ी आबादी कृषि पर निर्भर है।

सकारात्मक प्रभाव:

जैविक खेती में पारंपरिक खेती की तुलना में अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। संयुक्त राष्ट्र के एक अध्ययन से पता चलता है कि यह खेती पर रोजगार को 30% तक बढ़ा सकता है। यह वृद्धि हाथ से खरपतवार निकालने, खाद तैयार करने और उसे डालने जैसे कामों के कारण होती है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त श्रमिकों को काम मिलता है। हालांकि शुरुआती वर्षों में पैदावार में कमी हो सकती है, लेकिन लंबे समय के विश्लेषण से पता चलता है कि जैविक प्रणालियाँ अक्सर अधिक लाभदायक होती हैं। जैविक उत्पादों के लिए 20% से 100% तक की प्रीमियम कीमतें अक्सर पैदावार में कमी की भरपाई कर देती हैं, जिससे मुनाफा बढ़ता है। इसका एक मुख्य लाभ यह है कि सिंथेटिक (रासायनिक) उर्वरकों और कीटनाशकों पर होने वाले खर्च बंद हो जाते हैं, जो एक किसान की लागत का एक बड़ा हिस्सा हो सकता है। इससे कर्ज पर निर्भरता कम होती है। रासायनिक कीटनाशकों से परहेज करके, जैविक खेती किसानों और खेत मजदूरों के लिए कीटनाशकों के संपर्क में आने से होने वाले स्वास्थ्य जोखिमों (जैसे त्वचा रोग, सांस की

बीमारियाँ) को काफी कम कर देती है। इससे उपभोक्ताओं के लिए भी भोजन सुरक्षित रहता है।

विविध फसल प्रणालियों पर ध्यान केंद्रित करने से, जिसमें अंतर-फसल (intercropping) और कृषि-वानिकी (agroforestry) शामिल हैं, किसान परिवारों को साल भर विभिन्न प्रकार की खाद्य वस्तुएं- जैसे अनाज, दालें, सब्जियां और फल - मिलती हैं। महिलाएं पारंपरिक रूप से जैविक खेती के लिए महत्वपूर्ण कई गतिविधियों में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं, जैसे बीज का चयन और संरक्षण, खाद और वर्मीकम्पोस्ट तैयार करना। जैविक खेती अक्सर इन योगदानों को औपचारिक रूप देती है और महत्व देती है, जिससे महिलाओं को अधिक आर्थिक सशक्तिकरण और निर्णय लेने का अधिकार मिलता है।

चुनौतियाँ और नकारात्मक प्रभाव

अनिवार्य 2-3 साल की रूपांतरण अवधि (conversion period) एक महत्वपूर्ण आर्थिक बाधा है। इस दौरान, किसानों को जैविक प्रबंधन की लागत (जैसे अधिक श्रम) उठानी पड़ती है, लेकिन वे कानूनी रूप से अपने उत्पादों को "प्रमाणित जैविक" के रूप में नहीं बेच सकते हैं और इसलिए उन्हें प्रीमियम कीमतें नहीं मिलती हैं। रूपांतरण के शुरुआती वर्षों में अक्सर "पैदावार में कमी" देखी जाती है, क्योंकि मिट्टी की जैविक प्रणालियाँ ठीक हो रही होती हैं। इस कमी को बहु-फसल और प्रभावी फसल चक्र जैसी प्रथाओं के माध्यम से काफी कम या समाप्त किया जा सकता है।रोजगार पैदा करते समय, अधिक श्रम की मांग बड़े खेतों के लिए एक चुनौती हो सकती है, जिससे मजदूरी का बिल बढ़ जाता है। जैविक खेती एक ज्ञान-गहन प्रणाली है, न कि इनपुट-गहन। इसके लिए पारिस्थितिक सिद्धांतों, कीट जीवन चक्र और मिट्टी के जीव विज्ञान की गहरी समझ की आवश्यकता होती है, जिसके लिए मजबूत प्रशिक्षण और विस्तार सेवाओं की आवश्यकता होती है।

2. विपणन और निर्यात क्षमता

जैविक उत्पादों का बाजार विश्व स्तर पर और भारत में, दोनों ही जगह एक उच्च विकास वाला क्षेत्र है। यह शहरी उपभोक्ताओं के बीच बढ़ते स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता, उच्च आय और खाद्य सुरक्षा के बारे में जागरूकता से प्रेरित है। FSSAI (भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण) घरेलू बाजार में जैविक भोजन को नियंत्रित करता है। इस नियम के तहत "जैविक" के रूप में बेचे जाने वाले उत्पादों के लिए NPOP या PGS-India के तहत प्रमाणित होना और जैविक भारत लोगो लगाना अनिवार्य है।

भारत में दुनिया में सबसे अधिक जैविक उत्पादक हैं। उत्पादन के लिए राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (NPOP) के मानकों को यूरोपीय संघ, स्विट्जरलैंड और ग्रेट ब्रिटेन के बराबर मान्यता प्राप्त है, जो व्यापार को सुगम बनाता है। APEDA के अनुसार, भारत ने 2021-22 में 771.96 मिलियन अमरीकी डालर के जैविक उत्पादों का निर्यात किया।

मुख्य निर्यात उत्पाद: तिलहन (सोयाबीन), अनाज और बाजरा, चीनी, मसाले, चाय, दालें, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ और औषधीय पौधे।

शीर्ष खरीदार देश: संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोपीय संघ, कनाडा, स्विट्जरलैंड और ब्रिटेन।

3. निरीक्षण, प्रमाणन, लेबलिंग और मान्यता

प्रमाणन (Certification) जैविक बाजार की रीढ़ है, जो उपभोक्ताओं को एक सत्यापन योग्य गारंटी प्रदान करता है कि उत्पाद सख्त जैविक मानकों के अनुसार उत्पादित किया गया है।

- ✓ **मान्यता निकाय (Accreditation Body):** भारत में, APEDA (कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण) शीर्ष निकाय है जो राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (NPOP) को लागू करता है। APEDA प्रमाणन निकायों को मान्यता देता है।
- ✓ **प्रमाणन निकाय (Certification Bodies - CBs):** ये स्वतंत्र, तीसरे पक्ष की एजेंसियां (सार्वजनिक या निजी) हैं जो APEDA द्वारा मान्यता प्राप्त हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए निरीक्षण और सत्यापन प्रक्रिया करने के लिए जिम्मेदार हैं कि उत्पादक NPOP मानकों का पालन करते हैं।

NPOP प्रमाणन प्रक्रिया:

1. **आवेदन और फार्म योजना:** किसान एक प्रमाणन निकाय को आवेदन और एक विस्तृत जैविक प्रणाली योजना प्रस्तुत करता है।
2. **निरीक्षण:** CB का एक प्रशिक्षित निरीक्षक साल में कम से कम एक बार खेत का निरीक्षण करता है।
3. **मूल्यांकन:** निरीक्षक की रिपोर्ट की समीक्षा CB द्वारा की जाती है।
4. **प्रमाणन का निर्णय:** यदि उत्पादक को पूर्ण अनुपालन में पाया जाता है, तो एक प्रमाण पत्र जारी किया जाता है।
5. **लेबलिंग:** प्रमाणित उत्पादक अपने उत्पादों पर "इंडिया ऑर्गेनिक" लोगो का उपयोग कर सकते हैं, जो निर्यात के लिए अनिवार्य है।

सहभागी गारंटी प्रणाली (PGS-India):

यह कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा प्रचारित एक वैकल्पिक गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली है, विशेष रूप से घरेलू बाजार के लिए। यह एक विकेन्द्रीकृत, किसान-केंद्रित प्रणाली है जहां किसानों के स्थानीय समूह विश्वास, भागीदारी और सहकर्मी समीक्षा के सिद्धांतों के आधार पर एक-दूसरे का निरीक्षण और प्रमाणन करते हैं। यह एक कम

लागत वाली प्रणाली है, जो इसे छोटे किसानों के लिए सुलभ बनाती है। इस प्रणाली के तहत प्रमाणित उत्पाद PGS-India ग्रीन लोगो का उपयोग करते हैं।

4. जैविक खेती और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था

जैविक खेती का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान इसके प्रत्यक्ष बाजार मूल्य से कहीं अधिक है।

- ✓ **विदेशी मुद्रा आय:** जैविक उत्पादों का निर्यात विदेशी मुद्रा का एक महत्वपूर्ण और बढ़ता हुआ स्रोत है।
- ✓ **सब्सिडी का बोझ कम होना:** भारत सरकार उर्वरक सब्सिडी पर सालाना ₹1.5 लाख करोड़ से अधिक खर्च करती है। जैविक प्रथाओं की ओर एक बड़े पैमाने पर बदलाव इस वित्तीय बोझ को काफी कम कर सकता है।
- ✓ **पर्यावरणीय लाभ:** जैविक खेती पारंपरिक कृषि की "छिपी हुई लागतों" को कम करने में मदद करती है, जैसे कि मिट्टी का क्षरण, उर्वरक अपवाह से जल प्रदूषण और जैव विविधता का नुकसान।
- ✓ **जलवायु परिवर्तन शमन:** जैविक मिट्टी कार्बन में समृद्ध होती है। अनुसंधान इंगित करता है कि जैविक खेती मिट्टी में वायुमंडलीय CO_2 की महत्वपूर्ण मात्रा को अलग कर सकती है।
- ✓ **सतत विकास लक्ष्य (SDGs):** जैविक खेती कई SDGs को प्राप्त करने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है, जिसमें SDG 2 (शून्य भूख), SDG 3 (अच्छा स्वास्थ्य), SDG 6 (स्वच्छ जल), SDG 12 (जिम्मेदार खपत और उत्पादन), SDG 13 (जलवायु कार्रवाई), और SDG 15 (भूमि पर जीवन) शामिल हैं।

सरकारी पहलें:

1. **परंपरागत कृषि विकास योजना (PKVY):** यह क्लस्टर-आधारित जैविक खेती और PGS मॉडल के माध्यम से प्रमाणन को बढ़ावा देने वाली एक प्रमुख योजना है।
2. **उत्तर पूर्वी क्षेत्र के लिए मिशन ऑर्गेनिक वैल्यू चेन डेवलपमेंट (MOVCDNER):** यह योजना उत्तर-पूर्वी राज्यों में उत्पादन से लेकर प्रसंस्करण और विपणन तक जैविक मूल्य श्रृंखला विकसित करने पर केंद्रित है।

****

ISSN: 3049-2211

कृषक मंच - अक्टूबर 2025 संस्करण

लोकप्रिय लेखों के लिए आमंत्रण

वेबसाइट: krishakmanch.com

अंतिम तिथि: 28 अक्टूबर 2025

लेख के विषय:

- कृषि विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र: एग्रोनॉमी, बागवानी, कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, कृषि प्रसार, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि।
- नवीनतम कृषि तकनीकें।
- फसल प्रबंधन एवं रोग नियंत्रण।
- जैविक खेती एवं प्राकृतिक कृषि।
- जल संरक्षण व सिंचाई तकनीकें।
- सरकारी योजनाएं।

हमारे व्हाट्सएप समूह से जुड़ें: